चतुर्थ अध्याय

विवेच्य नाटकों में रंगमंचीयता

''चतुर्थ अध्याय''
: ''विवेच्य नाटकों में रंगमंचीयता'' :

'नाटक' साहित्य की सभी विधाओं का संचय-समुच्चय हैं । नाटक जनसंचार का प्राचीनतम् तथा जीवित माध्यम है । इसलिए नाटक एक विस्तृत परिवेश पूर्ण कला है । ''नेत्र वह व्यक्त करने में सफलता प्राप्त करता है, जहाँ वाणी मूक हो जाती है और वाणी वह भाव व्यक्त करती है, जिसके लिए नेत्र समर्थ नहीं । नाटक और भावों की भाषा का यह अटूट संबंध हैं ।''[1]

दशरथ ओझा का कथन हैं - ''यह तो स्पष्ट ही है कि नाटक दृश्यकाव्य है और दृश्यकाव्य में श्राव्य की अपेक्षा कई विशेषताएँ होती हैं । काव्य का श्रवण कर सकते हैं किंतु नाटक को श्रवण के साथ देख भी जा सकता है । यही इसकी विशेषता हैं ।''[2] नाटक साहित्यिक अभिव्यक्ति की एक ऐसी विद्या है, जो केवल साहित्य नहीं, उससे अधिक कुछ और भी हैं । क्योंकि रचना-प्रक्रिया लेखन द्वारा लिखे जाने पर ही समाप्त नहीं होती, उसका पूर्ण प्रस्फूटन और सम्प्रेषन रंगमंचपर जाकर ही होता है । नाटकीय कथावस्तु को अभिनेताओं के अभिनय द्वारा दर्शकों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है और अभिनय के लिए जिस उचित स्थान का प्रयोग किया जाता है वह स्थान रंगमंच कहलाता है । डॉ. माली ने रंगमंच के अर्थ पर विचार करते हुए लिखा हैं - '' रंगभूमि या रंगमंच एक व्यापक शब्द है, जिसके अंतर्गत रंगशाला, काव्य (नाटक), अभिनय (प्रयोक्ता.निर्देशक,रंगकर्मी और रंगशिल्प) तथा सामाजिक (प्रेक्षक) सभी आ जाते हैं । अपने सीमित अर्थ में रंगमंच 'रंगशाला' का वाचक बनकर रह गया है ।''[3]

नाटक और रंगमंच का अटूट रिश्ता है । नाटक वह कला है जिसकी सफलता का परीक्षण रंगमंचपर ही होता है । नाटक दृश्य काव्य है, प्रदर्शन इसका प्रधान गुण है और प्रदर्शन का प्रधान माध्यम रंगमंच है । नाटक रंगमंचपर प्रस्तुत किए जानेपर नाटक के अर्थ गौरव और शिल्प सौष्ठव का पूरा स्फूरण संभव होता है । नाटक की जीवंत और सार्थक अभिव्यक्ति रंगमंचपर ही होती है । रंगमंचपर ही नाटक सही जिंदगी जीता

---

1. *रमेश मल्होत्रा - साहित्य का समाजशास्त्र, पृष्ठ - 142*
2. *दशरथ ओझा - हिंदी नाटक : उद्‌भव और विकास, पृष्ठ - 32*
3. *डॉ. शिवराम माळी - नाटक और रंगमंच, पृष्ठ - 194*

है, क्योंकि नाटक जीवन से आता है और पुन: रंगमंच के माध्यम से जीवन में वापस आता है । इसलिए नाटक और रंगमंच का संबंध अन्योन्याश्रित हैं ।

अत: नाटक की रंगमंचीय प्रस्तुति में मंचसज्जा, प्रकाश योजना, ध्वनि संकेत, गीत-संगीत योजना, संवाद, अंक योजना आदि का महत्त्व निर्विवाद है । इसलिए यहाँ रंगमंचीय तत्वों का परिचय पाना अवश्यक हैं -

4.1 मंचसज्जा :-

रंगमंचीय उपादानों में रंगमंच का विशिष्ट स्थान हैं। नाटक का सम्पूर्ण वातावरण ही इसमें प्रतिरूपायित होता है । प्रस्तुति की सफलता बहुत कुछ मंचसज्जापर ही निर्भर रहती हैं । "नाटक के एक संतुलित और प्रभावोत्पादक अवश्यक परिवेश के रूप में दृश्यसज्जा आधुनिक नाटक का महत्त्वपूर्ण और अत्यन्तिक अंग है ।"[1] मंचसज्जा को दृश्यसज्जा, दृश्यबन्ध भी कहते हैं ।

'मंच' संस्कृत शब्द है । 'नालंदा विशाल शब्द सागर' में मंच का अर्थ इस प्रकार बताया है - "मंच, मंचक और मन्च।"वह ऊँचा बना हुआ मंडप जिसपर बैठकर सर्वसाधारण के सामने कोई कार्य किया जाए ।"[2] 'संस्कृत हिंदी कोश' में मंच शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया है - "मंच + छत्र = मंचकम् से उभरा हुआ आसन वेदी, सम्मान का आसन, व्यासपीठ, ऊँचा आसन आदि ।"[3]

आधुनिक युग में नाटक की प्रकृति के अनुसार मंचसज्जा की योजना की जाती हैं । नाटक में अंकित भाव-स्थितियों के अनुसार मंचसज्जा में परिवर्तन किया जाता हैं । नाटकीय व्यापार, पात्रों के किया व्यापार आदि को प्रस्तुत करने के लिए वातावरण की तैयारी करनी होती है जो विविध पर्दों, चित्रों, साज-सामान आदि की योजना के द्वारा की जाती है । यहाँ सुरेंद्र वर्मा के विवेच्य नाटकों की मंचसज्जा का विवेचन प्रस्तुत हैं -

---

1. *नेमचंद्र जैन - रंगदर्शन, पृष्ठ 30*
2. *नवलजी (संपा) - नालंदा विशाल शब्द सागर, पृष्ठ - 1037*
3. *संपा. वामन आपटे - संस्कृत हिंदी कोश, पृष्ठ 761*

'द्रौपदी'

सुरेंद्र वर्मा की 'द्रौपदी' नाटक आज के पारिवारिक जीवन की टूटन शिलता दर्शानेवाली एक आलादी है प्रस्तुत नाटक दो अंकों में विभाजित किया गया है । पहले अंक में घर का दृश्य है और दिन के समय का चित्रण । दूसरे अंक में बाहर का दृश्य है और रात के समय का चित्रण । नाटककार ने मंचसज्जा का वर्णन कुछ इस प्रकार से दिया है - ''मंचपर सामने दो दरवाजे । एक खाने की मेज । सोफे । कुर्सियाँ । दो दफ्तर की मेजें । एक के साथ रिवाल्विंग कुर्सी । दो टेलीफोन । पार्कवाले दृश्य में पार्क की केवल एक बेंच द्वारा पार्क का परिणाम देने की योजना हैं ।''[1]

इसकी मंचसज्जा पूर्ण रूपसे आधुनिक है । इस में धूरी, काटे, प्लेटे, कप आदि मंचित वस्तुओं का जिक्र हुआ है । नाटककार ने मुख्यत: सुरेखा, मनमोहन तथा उनके बालबच्च्यों को ध्यान में रखकर आधुनिक जीवन की विडंबना को दिखाया है । नाटक का दृश्यबंध महानगरीय वातावरण से मेल खाता है । पारिवारिक जीवन का यथार्थ चित्रण दर्शन की दृष्टि से उसकी योजना स्पृहणीय है ।

'सेतुबंध'

सुरेंद्र वर्मा के 'संतुबंध' नाटक की मंचसज्जा गुप्तकाल की दिखायी देती है । नाटककार ने मंचसज्जा का विवरण इस प्रकार किया है - ''कक्ष के केन्द्रीय भाग में आमने-सामने दो रत्न-जटित स्थंब । सामने और बायीं ओर एक-एक गवाक्ष । सामनेवाले गवाक्ष के दोनों ओर दो-दो नागदन्त । एक पर चँवर । शेष पर स्वर्ण एवं मणियों के आभूषण । एक द्वार दायी ओर जो प्रग्रीवक में खुलता है ।''[2]

एक ही दृश्यबंध पर पूरे नाटक की समस्त घटनाओं को मुख्यत: पात्रों के कार्यव्यापार के माध्यम से दर्शाया गया है । प्रस्तुत नाटक शुरू से अंत तक एक ही अंक में दर्शाया हैं । गुप्तकालीन ऐतिहासिक वातावरण निर्मिति की दृष्टि से मंचसज्जा का नियोजन सार्थक महसूस होता है ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ 73*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ 15*

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक'

सुरेंद्र वर्मा का 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' ऐतिहासिक पृष्ठभूमिपर आधारित नाटक है । प्रस्तुत नाटक तीन अंकों में विभाजित है । इसमें सूर्यास्त, रात्री के - विभिन्न प्रहर और सूर्योदय के समय को एक दृश्यबंध में बाँध दिया गया है । मंचसज्जा ओक्काक के राजप्रासाद का शयनकक्ष है ।

प्रथम अंक में मंचसज्जा की परिकल्पना नाटककार ने कुछ इस प्रकार दी है - "राजप्रासाद का शयनकक्ष । मंच की असली सीमा पर दाई और बाई ओर एक-एक द्वार । दांए के बाद मदिरा कोष्ट, बांए के बाद चौकी पर दर्पण एवं प्रसाधन सामग्री सामने आसंदी । बाई ओर बडा जालग वाद, बाई तथा सामने की दीवारके लगभग मध्य भाग से लेकर दोनों दीवारों के सम्मिलन तक । मंच के बीचों-बीच उपर से लटकता मुक्तालाप । सामने की दीवार के पास शैय्या । कुछ आसन एवं चौंकियाँ ।" [1]

द्वितीय और तृतीय अंक का दृश्यबंध वहीं हैं । प्रथम अंक में ओक्काक के राजप्रसाद के शयनकक्ष का दृश्यबंध राजसी, ऐश्वर्यपूर्ण ऐतिहासिक और काव्यात्मक वातावरण को उभारती हैं । मंचसज्जा के केंद्र की शैय्या यौन बिम्ब को उभारने का प्रयास करती हैं । दूसरे अंक का दृश्यबंध ओक्काक और शीलवती की मानसिक कुंठा, घुटन, अंर्तद्वंद्व और मनोदशाओं को व्यक्त करती है । मंच सज्जा के केंद्र की शैय्या को शीलवती और प्रतोष की शैय्या के रूप में भी प्रस्तुत है । इस नाटक की मंचसज्जा के बारे में देवेन्द्रकुमार गुप्ता लिखते हैं - "दृश्यबंध नाटक की ऐतिहासिकता, काव्यात्मकता तथा भारतीय परिवेश के बीच आज के आदमी की भीतरी आवश्यकता और वातावरण को प्रस्तुत करता है । नाटक के शीर्षक के साथ जुडा यौन बिम्ब शैय्या के माध्यम से इस तरह गुंथा गया है कि शैय्या सारे नाटक की केंद्रीय संवेदना बन गयी है । काम संबंधों पर आधारित स्त्री- पुरुष संबंध दृश्यबंध में सूर्यास्त और रात्री के विभिन्न प्रहरों में प्रकट होते हैं ।" [2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ 13*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ 37*

'आठवाँ सर्ग'

सुरेंद्र वर्मा का 'आठवाँ सर्ग' तीन अंकीय त्रासद नाटक है जो एक ही दृश्यबंधपर मंचित होता है । इस नाटक का तीसरा अंक दो दृश्यों में विभाजित है । प्रथम दो अंकों का समय क्रमश: ढलती दोपहर और आधी रात है, तीसरे अंक का प्रथम दृश्य अपराहुन और दूसरे दृश्य का समय आधी रात है।

प्रथम अंक का दृश्यबंध कालिदास के भव्य भवन का बाहरी कक्ष है जिसकी मंचसज्जा इस प्रकार हैं - "मंच के बीच में एक लंबा, और फिर दो आसन - एक चौकी के साथ । मंच के आगले भाग में पुस्तकाधार और छोटा आसन । उसके पीछे मदिराकोष्ठ । बिलकुल पीछे एक ओर झूला और दूसरी ओर चित्रफलक । बीच में ऊँचा दीपदान । दायी व बायीं ओर एक-एक द्वार । बाहरी द्वार पर मंगलकलश एवं रंगोली ।"[1] द्वितीय अंक का दृश्यबंध भी वही हैं ।

'आठवें सर्ग' की मंचसज्जा कुछ परिवर्तन के साथ इब्राहिम अल्का ने प्रस्तुत की थी, जिसे देखकर जयदेव तनेजा के मन पर इस प्रकार प्रभाव पडा - "पुस्तकाचार, मदिराकोष्ठ, झूले, चित्रफलक, दीपदान, मंगलकलश और रंगोली से निर्मित दृश्यबंध भारतीय इतिहास के स्वर्णकाल के सर्वश्रेष्ठ रचनाकार निवास की भव्यता, सौष्ठव और परिष्कृति के पूर्णत: अनुकूल था ।"[2] इस प्रकार प्रस्तुत नाटक की मंचसज्जा को स्पष्ट किया है ।

'शकुंतला की अंगूठी'

सुरेंद्र वर्मा का 'शकुंतला की अंगूठी' नाटक 1971 में नयी दिल्ली 'संभव' तथा 'भारतभवन रंगमंडल, भोपाल' द्वारा मंचित हो चुका है । प्रस्तुत नाटक के लिए नाटककार ने त्रीस्तरीय अथवा तीन भागों में मंच को विभाजित करनेवाली मंचसज्जा की अपेक्षा की हैं। प्रस्तुत नाटक का मंच तीन भागों में बँटा है । जैसे - बीच में पूर्वाभ्यास की जगह जहाँ कुर्सियाँ, टेबूल हैं । एक ओर कुमार का रहने का कमरा है और दूसी ओर उसका दफ्तर । प्रस्तुत नाटक को चौदह दृश्यों में विभाजित हैं । नाटक की कुल तीन घटनाएँ अलग-अलग स्थानपर घटित होती हैं । जैसे -

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ 17*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ 17*

1. नाटक का पूर्वाभ्यास स्थल - दृश्य क्र. 1,3, 6, 7,9,10, 11, 12, 13, 14
2. कुमार का दफ्तर - दृश्य क्र. 2
3. कुमार का कमरा - दृश्य क्र. 4, 5, 8

प्रस्तुत नाटक की मंच सज्जा को इस प्रकार विभाजित किया है -

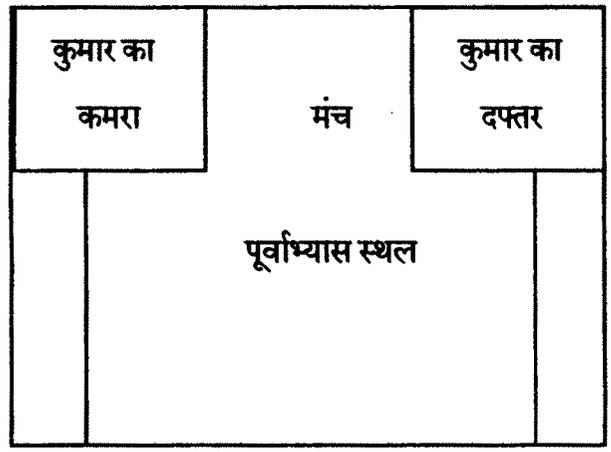

उपर्युक्त विभाजन से स्पष्ट है कि नाटक की सर्वाधिक घटनाएँ पूर्वाभ्यास स्थलपर ही घटित होती हैं जिसपर अभिनेताओं के अधिक क्रियाव्यापार होते हैं । इसलिए मंच का अधिक हिस्सा पूर्वाभ्यास के लिए आरक्षित करने की आवश्यकता है । नाटक में पूर्वाभ्यास के स्थलपर एक ओर दरवाजा - चार - पाँच कुर्सियाँ । कुमार के दफ्तर में दो कुर्सियाँ, एक टेबूल, रजिस्टर, फाइलें आदि । कुमार के कमरे में एक चारपाई, मेज, कुर्सी, किताब की रॅक, चाय के प्याले आदि सामान है । मंच पर वस्तुओं के रूप में नाटक का आलेख, डायरी, पेन, अंगूठी, चाय की किटली, सीढि, बाल्टी, अखबार, शराब की बोतलें आदि वस्तुओं का जिक्र हुआ है ।

अत: सुरेंद्र वर्मा ने अपनी सजग नाट्ययेतना के कारण प्रत्येक नाटक में मंच-सज्जा के अंतर्गत यथार्थवादी, प्रतिकात्मक और बिम्बात्मक मंज-सज्जा का चित्रण किया है ।

4.1.1 मंच सज्जा के प्रकार

आधुनिक रंगमंच पर तीन प्रकार की मंचसज्जाओं का उपयोग किया जाता है -

1. चित्रांकित मंच-सज्जा
2. प्रकृतिवादी मंच-सज्जा
3. प्रतीक मंच-सज्जा

4.1.1.1 चित्रांकित मंच-सज्जा

चित्रांकित मंच-सज्जा में रंगे हुए पर्दों के प्रयोग की प्रवृत्ति होती हैं । सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में चित्रांकित मंचसज्जा का प्रयोग हुआ है । उनके 'द्रौपदी' नाटक के अंतर्गत प्रथम दृश्य में पार्क का दृश्य दिखाने के लिए पार्क के जैसे रंगीन पर्दे का प्रयोग किया है । इसमें घर का दृश्य दिखाने के लिए छत, दीवारों का चित्र रंगीन पर्दों द्वारा ही दर्शाया गया है ।

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक के कुछ दृश्यों में परदों का उपयोग करके नाटक के दृश्यों को आकर्षित बनाने का प्रयास किया है । प्रस्तुत नाटक के मदनोत्सव के लिए डाला गया मंडप रंगीन पर्दों को स्थंबों के सहारे दर्शाकर नाटककार ने अपनी कल्पनाशीलता का एक सफल नमुना दिखाया है ।

'आठवाँ सर्ग' के अंतर्गत प्रथम अंक में उज्जयिनी में कालिदास के सम्मान समारोह में आयोजित सभा के लिए ओर मदनोत्सव का वातावरण दर्शाने के लिए रंगीन पर्दों का उपयोग किया है ।

4.1.1.2 प्रकृतिवादी मंचसज्जा :

प्रकृतिवादी मंचसज्जा में 'बाक्स सेटिंग' दृश्यबंध का प्रयोग होता है । इसमें ड्राईंगरूम, होटल, मंदिर, गाँव, नगर आदि के यथार्थ रूप दिखलाये जातें हैं । विवेच्य नाटकों में प्रकृतिवादी मंचसज्जा का प्रयोग प्रच्युर मात्रा में हुआ हैं । 'द्रौपदी' नाटक में सुरेखा मनमोहन का घर, मनमोहन का दफ्तर आदि के

मंचपर उपस्थित करने के लिए प्रकृतिवादी मंचसज्जा का प्रयोग किया है । नाटक के पहले अंक के पहले दृश्य में उसके घरके दृश्य में खाने की मेज, कुर्सियाँ, दो टेलिफोन आदि से सुसज्जित कर के मनमोहन की संपन्नता को व्यक्त किया है । नाटक के दूसरे अंक में भी ऐसी ही सजधज दिखायी हैं ।

'शकुंतला की अंगूठी' नाटक में प्रस्तुत मंचसज्जा को यथेष्ट स्थान मिला हैं । इसमें कुमार का कमरा, उसका दफ्तर तथा उसका पूर्वाभ्यास स्थल आदि सभी जगहों में प्रकृतिवादी रंगसज्जा का उपयोग हुआ है । इन सब चिजों का चौखाटा तैय्यार करके उसे नाटक की रंगमंचीय प्रस्तुति में प्रयुक्त किया जा सकता है ।

प्राकृतिक मंचसज्जा का 'आठवाँ सर्ग' नाटक में बहुत सुंदर प्रयोग हुआ है । नाटक में प्रस्तुत कालिदास का भवन, उसमें शयनकक्ष, उद्यान इनका दृश्यबंध इस मंचसज्जा का एक सुंदर उदाहरण है । प्रस्तुत नाटक ऐतिहासिक होने के कारण उसी काल की वस्तुओं से मंच को सजाया है जो प्राकृतिक है, जैसे - मदिराकोष्ठ, झूला, आसन-व्यवस्था, दीपदान, चित्रफलक आदि । इन सभी वस्तुओं का बाक्स-सेटिंग करने से नाटक की हर प्रस्तुति में आसानी हो जाएगी ।

सुरेंद्र वर्मा का 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक का रंगमंच भी प्रकृतिवादी लगता है । ओक्काक का राजप्रसाद उसमें मौजूद वस्तुएँ, शयनकक्ष आदि की मंचसज्जा ऐतिहासिक है । नाटक की विशिष्टता है कि नाटक के तीनों अंकों में एक ही मंच सज्जा का प्रयोग हुआ है । केवल पात्रों एवं समय में हेरफार किया गया है । अत: शयनकक्ष की सामग्री का बाक्स सेटिंग किया जाए तो नाटक के हर एक मंचन में उनको आसानी से इस्तमाल किया जा सकता है ।

'सेतुबंध' नाटक एक ही दृश्यबंध पर सभी घटनाओं को दर्शाया गया है । नाटक में प्रवरसेन का राजभवन, सम्राट चंद्रगुप्त का राजभवन, अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन आदि दृश्यों को दर्शाया गया है । गुप्तकालीन परिवेश का यह एक आदर्श नमूना है । जो इसे नाटक के प्रकृतिवादी रंगमंचसज्जा से स्पष्ट होता है ।

4.1.1.3 प्रतीक मंजसज्जा

प्रतीक मंचसज्जा के अंतर्गत मंदिर, वन, राजपथ, उपवन, पेड, प्रवेशद्वारा आदि को यथातथ्य रूप में रखने की प्रवृत्ति नहीं होती । अपितु तक्ति या प्लाई की लकडी पर इनका रंगा हुआ स्थान या चित्र यथास्थान दिखलाया जा सकता है । उदा. एक गाँव के दृश्य की व्यंजना करने के लिए वृक्ष के नीचे एक झोंपडी जैसे प्रतीक को काम में लाया जा सकता है । सुरेंद्र वर्मा के सभी नाटको में जहाँ चित्रांकित मंचसज्जा का प्रयोग हुआ है, वहाँ प्रतीक मंचसज्जा को भी काम में लाया जा सकता है ।

4.2 ''ध्वनि संकेत''

ध्वनि संकेत नेपथ्य के अंतर्गत आता है । परंपरागत रूप से रंगमंचपर जिन घटनाओं को न दिखलाकर मात्र सूचित किया जाता है उसे 'नेपथ्य' कहतें हैं । विज्ञान की प्रगति के कारण तकनीकी के सहारे व नेपथ्य के अंतर्गत विविध ध्वनियाँ, प्रकाश योजना आदि तत्व आ जाते हैं । आधुनिक काल में टेपरेकॉर्डर, विविध वाद्य आदि की साह्यता से रंगमंचपर भीड के अर्थहीन कोलाहल से लेकर पशु-पक्षियों की बोलियाँ, मेघ गर्जना, घोडों के टापों की एवं हिनहिनाहट की आवाज आदि अनेक प्रकार की ध्वनियों को सुनवाया जा सकता है । ध्वनि संकेतों की साह्यता से रंगमंचपर वातावरण के यथार्थ को अधिक गहरा रंग प्रदान किया है ।

ध्वनि की अपनी एक भाषा और संकेत होतें हैं । विविध प्रकार की ध्वनि प्रयोगों से नाटक के दृश्यों, संवेदनाओं और मनोभावों को मुखरित किया जाता है । प्रेम, शोक, हर्ष, विशाद, चांचल्य, जडता, गर्व, शंका आदि विविध मनोविकारों को ध्वनि वैविध्य प्रयोगों से प्रकट किया जाता है । इसके अंतर्गत - कंठ, हाथ-पैर, वाद्य यंत्र, टेपरेकॉर्डर, माईक्रोफोन, लाऊड-स्पिकर आदि साधनों का प्रयोग किया जाता है । इसके द्वारा विविध प्रभाव निर्माण कर दर्शकों को प्रभावित किया जाता है ।

सुरेंद्र वर्मा के विवेच्य नाटको में विविध ध्वनि संकेतों का प्रच्युर मात्रा में सार्थक प्रयोग दिखायी देता है । यह ध्वनि संकेत वातावरण की निर्मिति करने में सहायक सिद्ध हुए हैं । जैसे -

4.2.2 उद्घोषक की आवाज

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक के पहले अंक के पाँचवे दृश्य में नेपथ्य द्वारा उद्घोषणा के स्वर सुनायी देतें हैं - ''मल्लराज्य के हर नागरिक को -सूचना दी जाती हैं की आज से ठिक एक सप्ताह बाद ... ××× एक रात के लिए ... सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक उपपति के रूप में चुनेंगी ।''[1] इसी उद्घोषणा को नाटक के अंत में भी दोहराया गया है ।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि उपर्युक्त आवाज से दर्शकों को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अनुभव होता है । अत: इसका प्रयोग नाटककार ने बडी खुबी से किया हैं ।

4.2.3 नगाडे की आवाज :

इस प्रकार का प्रयोग 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक के प्रथम अंक के चौथे दृश्य में किया है । ''नेपथ्य से नगाडे की ध्वनि । फिर उद्घोषक का स्वर ... मल्लराज्य के हर नागरिक ... ××× उपपति के रूप में चुनेंगी । फिर से नगाडे की ध्वनि ।''[2]

उपर्युक्त ध्वनि निर्देश से दर्शकों को ऐतिहासिक घटना का दर्शन होता है । अत: उन्होंने अपने इस नाटक में नगाडे की ध्वनियों का उपयोग बडी कुशलता से किया है ।

4.2.4 नारियों के खिलखिलाहट की आवाज :

'आठवाँ सर्ग' नाटक के प्रथम अंक के पहले दृश्य में कीर्तिभट्ट और प्रियंवदा के बीच संवाद हो रहा था तब उसी समय नेपथ्य से खिलखिलाती हुई अनसूया और पारिचारिका प्रवेश करती हैं । यह घटना नाटक के तीसरे अंक में भी हुई हैं । इस प्रकार नाटककार ने नारियों की हँसने की आवाज को बडी कल्पकता के साथ सादर किया है जिससे दृश्य और भी सजीव बन गया है ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 35*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 25*

4.2.5 आहट की आवाज :

'सेतुबंध' नाटक के छटवे दृश्य में विभावती ओर प्रवरसेन के बीच अपनी माँ के संबंध में गोपनीय बातें चल रही थी । उसी वक्त दायें द्वार के बाहर कुछ आहट होती हैं। उसे सुनकर प्रवरसेन विभावती से कहता है - ''जल्दी चली जाओं माँ आ रही हैं ।'' [1]

'आठवाँ सर्ग' में प्रथम अंक के पाँचवें दृश्य के दरमियान कालिदास अपनी पत्नी के साथ प्रेम व्यवहार और वार्ता में मग्न थे । जैसे - ''कालिदास प्रेमभाव से उसकी बाहें थाम लेता है, उस अपनी और घुमाता है ... प्रियंगु पलके बन्द कर लेती है ××× तभी उद्यान वाली द्वार से प्रियंवदा के आने की आवाज ... ।'' [2]

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्ण की पहली किरण तक' नाटक के प्रथम अंक के पहले दृश्य में महत्तरिका और ओक्काक निद्रा और स्मिरण की बातों में मग्न थे । ओक्काक विव्हलता से अपनी निराश मन:स्थिति को उसे बता रहा था तभी बाएँ द्वार पर कुछ आहट होती है । तब ''(चौंककर) कौन है वहाँ ? (चुपके से महामात्य, राजपुरोहित और महाबलाधिकृत का प्रवेश) ।'' [3]

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट होता है कि नाटककार ने अपने नाटकों में आहट की आवाज से अपनी कल्पकता का परिचय दिया है । जिससे नाटक रोचक बन पडें हैं ।

4.2.6 घोडों के टापों की एवं हिनहिनाहट की आवाज :

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्ण की पहली किरण तक' नाटक के तीसरे अंक के प्रथम दृश्य में महत्तरिका सूर्य की पहली किरण के आने की सूचना देने आती हैं। राजद्वार पर महामात्य, महाबलाधिकृत और राजपुरोहित शीलवती की आने की प्रतीक्षा में हैं । तभी नेपथ्य से घोडों के टापों की आवाज आती हैं जो बिल्कुल पास आकर थम जाती है । वह घोडें शीलवती के रथ के थे, जिससे शीलवती का आगमन होनेवाला था ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ 29*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ 27*
3. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ 17*

'सेतुबंध' नाटक के अंतर्गत सुरेंद्र वर्मा ने बहुत जगहोंपर घोडे की हिनहिनाहट की आवाजों को प्रयुक्त किया है । इस नाटक के पहले दृश्य में घोडे की हिनहिनाहट की आवाज नेपथ्य द्वारा दिखायी गयी है । उज्जयिनी सम्राट का प्रिय घोडा 'गंधमाधन' फिसलकर गिर जाने के कारण उससे बडे बडे घाव लगे थे । इसलिए उसे बहतु कष्ट हो रहा था । इसलिए वह हिनहिना रहा था । यह बात दौवारिकी से स्पष्ट होती है ।

4.2.7 पक्षी के बालने की आवाज :

सुरेंद्र वर्मा के 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्ण की पहली किरण तक' नाटक के दूसरे अंक के पहले दृश्य में नेपथ्य द्वारा पक्षी की बोली की आवाज निकालकर ओक्काक को पूछने के लिए विवश किया कि यह कौनसी ध्वनि हैं । तब महत्तरिका कहती है - "चक्रवाक पक्षी है महाराज ! महादेवी के हाथ से मृणाल का रस नहीं मिला, उनका स्वर नहीं सुना, इसलिए व्याकुल है।"[1] प्रस्तुत नाटक के तीसरे अंक के पहले दृश्य में नेपथ्य द्वारा पक्षियों की चहचहाने की ध्वनि सुनायी है । जिससे सूर्य की पहली किरण के आगमन की वार्ता मिलती है । जो सुबह होने का संकेत दे रही हैं ।

'आठवाँ सर्ग' नाटक के पहले अंक के पहले ही दृश्य में पक्षियों के कलख का प्रयोग किया है । कालिदास के सम्मान - समारोह के कारण भवन का सारा वातावरण मंगलमय है । इसी आनंद में प्रियंवदा गुणगुणा रही है और उसका साथ कोयल दे रही हैं।

सुरेंद्र वर्मा ने उपर्युक्त ध्वनि- प्रयोग से नाटकीय वातावरण में नैसर्गिक तथा प्राकृतिकता लाने का सफल प्रयास किया है ।

4.2.8 ट्रैफिक का शोर :

'द्रौपदी' नाटक में सुरेंद्र वर्मा ने नेपथ्यद्वारा ट्रैफिक की आवाज का सुंदर प्रयोग किया है । इस नाटक के पहले अंक के चौथे दृश्य में अंजना और लाल नकाबवाले बीच के संवादों के समय नेपथ्य द्वारा

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ 37*

सुनाया गया शोर अंजना की मानसिक घुटन, निराशा, थकान और ट्रैफिक की भीड से हुयी अवस्था को व्यक्त करने का संकेत देता है । प्रस्तुत नाटक के दूसरे अंक के पहले दृश्य में नेपथ्य द्वारा आया ट्रैफिक का ऊँचा शोर मनमोहन की मानसिक अवस्था, पीडा तथा इस शोर के बीच फँसे पागल को दर्शाता है ।

4.2.9 तालियों की आवाज :

सुरेंद्र वर्मा ने 'शकुंतला की अंगूठी' नाटक में तालियों का प्रयोग बडी खूबी से किया है । प्रस्तुत नाटक के पहले दृश्य में कुमार कनक एवं सभी रंगकर्मी शकुंतला के बारे में सोच-विचार कर रहे थे -

"मंदाकिनी : शकुंतला को दुर्वासा ने शाप क्यों दिया ? और शकुंतला की उंगली से अंगूठी क्यों गिरी ? ×××

कुमार : ... औरत आदमी से बेहत्तर होती है, इसलिए उसका दु:ख ज्यादा गहरा असर पैदा करता है ।" [1]

कुमार के इस कथन से खुश होकर सभी अभिनेत्रियाँ तालियाँ बजाती हैं । निष्कर्षत: सुरेंद्र वर्मा ने इस का प्रयोग बहुत ही कलात्मक ढंग से किया है ।

4.2.10 नुपूरों की आवाज :

'आठवाँ सर्ग' के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य तथा तीसरे दृश्य में नुपूरों की आवाज को नेपथ्य द्वारा सुनाया गया है । प्रियंवदा का मंचपर आगमन होते समय इन नुपूरों की आवाज का सहारा लिया है । जिससे प्रियंवदा और अनसूया की चंचल और चपल स्वभाव को दर्शाते हैं ।

4.2.11 घंटी की आवाज

सुरेंद्र वर्मा ने अपने 'द्रौपदी' नाटक में घंटी की आवाज का भी प्रयोग किया है । प्रस्तुत नाटक के प्रथम अंक के सातवें दृश्य में मनमोहन के दफ्तर को दर्शाया है । उस वक्त मैनेजर किसी बात की पूछताछ

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ 77*

के लिए मनमोहन को घंटी की आवाज देकर बुलाता है । मनमोहन आवाज सुनकर फौरन डायरेक्टर के पास चला जाता है । यहाँ सुरेंद्र वर्मा ने नेपथ्य से घंटी की आवाज निकालकर मंचपर दफ्तर की वास्तविकता लाने का प्रयास किया है ।

4.2.12 टेलिफोन की आवाज :

सुरेंद्र वर्मा ने 'द्रौपदी' नाटक के अंतर्गत नेपथ्य से टेलिफोन की आवाज को अनेक बार प्रस्तुत किया है । नाटक के प्रथम अंक के द्वितीय दृश्य में फोन की घंटी का इस्तमाल किया है - "फोन की घणटी ।"[1] सुरेखा रिसीवर उठाती है । नाटक के इसी अंक के अंतर्गत अंजना द्वारा फोन का इस्तेमाल दिखायी देता है ।

इस प्रकार सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटक में आधुनिक काल के इस तंत्र का यथेष्ट मात्रा में उपयोग किया है । टेलिफोन द्वारा बातचीत से नाटक के यथार्थता का रंग अधिक गहरा हुआ परिलक्षित होता है ।

4.2.13 आभूषणों एवं वस्त्रों की सरसराहट :

नाटककार ने 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक के दूसरे अंक के अंतिम दृश्य में मंचपर अंधेरा है, उस वक्त शीलतवी व प्रतोष के दरमियान रात में काम-क्रीडा का प्रयोग शुरू है । उस वक्त शायनागार से उन दोनों के हालचाल एवं दंगा-मस्ती से वस्त्रों की सरसराहट तथा आभूषणों की झंकार की आवाजें नेपथ्य से सुनायी हैं -

"शीलवती : (गहरी साँस लेकर) पूरे चाँद की रात है न्... सुनो, तनिक
मेरी यह माला निकाल दोगे ? .. चुभ रही है गले में ... !
प्रतोष : अच्छा ... करवट ले लो ... !
(वस्त्रों की सरसराहट । आभूषणों की झंकार ।)"[2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी पृष्ठ - 77*
3. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरणे से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 52*

प्रस्तुतनाटक में नाटककार ने आभूषणों एवं वस्त्रों की आवाज का वैशिष्ट्यपूर्ण एवं सांकेतीक प्रयोग किया है । प्रस्तुत नाटक के इस ध्वनि संकेत द्वारा नाटककार ने दर्शकों की भावनाओं को जगाने का प्रयास किया है ।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात यह दृष्टिगोचर होता है कि सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में विविध ध्वनि संकेतों का प्रच्युरता से प्रयोग हुआ हैं । इन के कुशलता पूर्वक किए गए प्रयोगों से वातावरण निर्मिति और सुच्य कथाभागों पर प्रकाश पडता है । विवेच्य नाटकों की यह एक महत्त्वपूर्ण विशेषता माननी होगी ।

4.3 संगीत - योजना

मंचपर वातावरण को यथार्थता एवं प्रभावात्मकता प्रदान करने के लिए संगीत-योजना महत्त्वपूर्ण कार्य करती हैं । मंचपर प्रकाश योजना के माध्यम से प्रात:काल का मनोहरी दृश्य पार्श्व संगीत की साह्यता से और भी प्रभावशाली बन जाता है । संगीत-योजना आधुनिक रंग-मंच प्रस्तुति को अत्यंत सरल, सुलभ एवं सम्मोहक आयाम प्रदान करती हैं । नाटक में यथार्थवादी सधन प्रभाव उत्पन्न करने में संगीत का योगदान अनिवार्य होता है,। इस संदर्भ में डॉ. नेमिचंद्र जैन के विचार दृष्टव्य हैं, - "केवल गितों की धूनें बजाना ही संगीत का उद्देश्य नहीं होता, बल्कि मंचपर अभिनेताओं के संवादों के साथ एक सुनियोजित सम्बन्ध में प्रस्तुत होकर कभी संगीत में, कभी विशमता या विसंगती में ध्वनि प्रभावों और पृष्ठभूमि के संगीत ने एक सर्वथा नवीन सार्थकता प्राप्त की है ।" [1]

(जब अभिनेता अपने अंगिक भिनय से अपने हृदयस्य आनंद, विशाद, निराशा, क्रोध, आक्रोश, कुंठा, थकान आदि काक व्यक्त करना चाहता है तब संगीत की तीव्रता, मंदता, सधनता तथा बिखराव से उचित प्रवाह निर्मा किया जा सकता है । अत: संगीत-योजना का नाटकीय वातावरण, नाट्यगत पात्रों के मनोभाव प्रदर्शन में बडा महत्त्वपूर्ण उपयोग होता है ।) अत: सुरेंद्र वर्मा के विवेच्य नाटको में पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण निम्न प्रकार से संगीत योजना के सहारे किया हैं।...

---

1. *डॉ. नेमिचंद्र जैन - रंगदर्शन, पृष्ठ - 67*

सुरेंद्र वर्मा का 'शकुंतला की अंगूठी' यथार्थवादी होने के कारण नाटककार ने जान-बूझकर संगीत संबंधी विशेष उल्लेख नहीं किया हैं । स्वाभाविक क्रिया व्यापारों के द्वारा निम्न प्रकार से पार्श्व संगीत का चित्रण जरूर हुआ है । जैसे, प्रस्तुत नाटक के चौदहवें दृश्य कें अंत में कनक सुदर्शन को अंगूठी पहनाती है, तब सब कलाकार बधायी देते हैं । उसी वक्त नाटककार ने नेपथ्य द्वारा शहनाई की आवाज को प्रस्तुत किया है जैसे "नेपथ्य में शहनाई ।" [1] केवल इसी एक ही बार पूरे नाटक में संगीत का उल्लेख नाटककार ने किया है ।

प्रस्तुत नाटक के आठवें दृश्य के अंत में शृंगारिक वातावरण निर्माण हुआ है । जैसे "कुमार कनक को अपनी बाहों में ले लेता है, उसे चूमने के लिए झुकता है । कनक की बाहें उसे घेर लेती हैं ।" [2] इस दृश्य में और पूर्वस्मृति के तीन दृश्यों में पार्श्व संगीत की अत्यंत आवश्यकता है । लेकिन नाटककार ने यहाँ संगीत दिया नहीं है ।

'द्रौपदी' नाटक के प्रथम अंक के पार्श्व संगीत से नाटककार ने हिंदी रंगमंचीय आंदोलन को एक बहुआयामी उपलब्धि प्रदान की है । नेपथ्य से आनेवाली पाश्चात्य संगीत की धीमी धून जिस पर अनील आत्मविस्तृत ढंग से ताल दे रहा है । पाश्चात्य संगीत की धुन से ताल और सूर का प्रयोग इस दृश्य द्वारा देखने को मिलता है । प्रस्तुत नाटक के अंतर्गत एक ही बार पार्श्व संगीत का प्रयोग देखने को मिलता है ।

इस नाटक के कुछ दृश्यों में पार्श्व-संगीत का आयोजन किया जा सकता है । जैसे अनील और वर्षा एवं राजेश - अलका इन दोनों के मिलन के शृंगारिक वातावरण के समय और मनमोहन - अंजना, रंजना तथा वंदना इन के मिलन के समय के दृश्यों में पार्श्व-संगीत की अत्यंत आवश्यकता हैं। लेकिन प्रस्तुत नाटक में इन दो-तीन दृश्यों के दरमियान संगीत के लिए नाटककार ने कहीं कोई गुंजाईश नही छोडी हैं।

सुरेंद्र वर्मा का 'सेतुबंध' नाटक ऐतिहासिक होने के बावजूद भी संगीत से वंचित है । प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने किसी भी दृश्य मे संगीत के बारे में उल्लेख नहीं किया है । लेकिन इस नाटक के कुछ दृश्यों

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी , पृष्ठ - 113*
2. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी , पृष्ठ - 69*

में पार्श्व संगीत का आयोजन किया जा सकता है । जैसे - ''अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन ।''[1] यह दृश्य एक मंगलमय वातावरण को सूचित करता है । अत: इस मंगल कार्य अवसर पर पार्श्व संगीत में किसी वाद्यों को बजाया जा सकता था । इस के साथ साथ प्रस्तुत नाटक में संघर्ष मय दृश्यों को अनेक बार दर्शाया है, उस वक्त संघर्षात्मक पार्श्व संगीत का आयोजन किया जा सकता है । स्पष्ट है कि सुरेंद्र वर्मा का यह पूरा नाटक संगीत के प्रयोग से रहित दिखाया गया है ।

सुरेंद्र वर्मा के 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में नेपथ्य से मंद हो जानेवाली मंगलवाद्य ध्वनियों का संगीत यह सूचित करता है कि राजप्रसाद के शयनकक्ष में अब कुछ मंगलमय घटनाएँ घटित होनेवाली हैं । यहाँ ध्वनियों के रूप में भारतीय संस्कृति का आभास होता है । महामात्य के प्रस्थान के समय पर वाद्य संगीत की ऊँची - नीची लय और ओक्काक का नि:शब्द प्रवेश से यह सूचित होता है कि ऊँचि नीची लय के मुताबिक ओक्काक के जीवन में भी उसी स्थितियों का निर्माण होनेवाला है । यहाँ संगीत-योजना के द्वारा नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में संकेतात्मकता का प्रयोग कर प्रसंग को और अधिक सजीव बनाने का प्रयास किया है ।

सुरेंद्र वर्मा का 'आठवाँ सर्ग' नाटक में संगीत योजना का बडा सार्थक प्रयोग हुआ है । प्रस्तुत नाटक में दिया गया पार्श्व संगीत नाट्यगत पात्रों की संवेदनाओं को व्यक्त करता है । इस नाटक के प्रथम अंक के पहले ही दृश्य में नेपथ्य द्वारा विविध वाद्य ध्वनियों को प्रस्तुत किया गया है जो धीरे-धीरे मंद होती हुयी सुनायी देती हैं । इसी अंक में नेपथ्य द्वारा विविध मंगल-वाद्यों द्वारा संगीत देने का प्रयास किया है जो कालिदास के 'कुमार संभव' रचना के अवसत पर सम्मान समारोह के आयोजन का संकेत देता है । इस नाटक के प्रथम अंक के अंतर्गत उल्हास दर्शक, एवं मदमस्त वातावरण को प्रस्तुत करने में दिया यह पार्श्व संगीत कालिदास की मंगल स्थिति को अभासित करता है ।

प्रस्तुत नाटक के तृतीय अंक के द्वितीय दृश्य की संगीत योजना कालिदास के टूटे व्यक्तित्व को मंचित करने में प्रभावोत्पादक बन पडी हैं। 'अभिज्ञान शाकुंतल' के उपलक्षमें शासन द्वारा आयोजित सम्मान समारोह को कालिदास उपस्थित न रहकर 'आठवें सर्ग' के अवसर पर हुये अपमान का बदला लेना

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग , पृष्ठ - 74*

चाहता है । जब शासन की ओर से चंद्रगुप्त नटराज की प्रतिमा लेकर कालिदास के भवन पधारते हैं, तब कालिदास इस सम्मान को स्वीकारने की मन:स्थिति में होते नहीं हैं । उनका मन तीन वर्ष पूर्व सम्मान समारोह में हुये मानहीन कटू स्मृतियों में विकल है । कालिदास के तिरस्कार भरे व्यवहार से परेशान होकर चंद्रगुप्त चले जाते हैं । उनके जाने के बाद कालिदास चषक भर मदिरा पीता है और व्यथित रूप से मंजरी से पूछता है - "कुमारसंभव की पाण्डलपि कहाँ रखी है ?" [1] उस वक्त नेपथ्य से गहन अंर्तद्वन्द्व एवं तनाव को व्यंजित करनेवाला पार्श्व संगीत गहरा हो जाता है जो कालिदास की क्षत-विक्षत मनोदशा का द्योतक है ।

4.4 गीत योजना :

सुरेंद्र वर्मा के 'शकुंतला की अंगूठी', 'आठवाँ सर्ग' और 'द्रौपदी' इन सभी नाटकों के अनेक दृश्यों में गीत-योजना का बडा सार्थक प्रयोग हुआ है ।

'शकुंतला की अंगूठी' नाटक में गीत-योजना का प्रच्युर मात्रा में प्रयोग हुआ है । प्रस्तुत नाटक के प्रारंभिक दृश्य में कुमार बैठा आलेख पढ़ रहा है । उसके साथ नाटक में काम करनेवाला कोई भी रंगकर्मी अभितक आया नहीं है । कुछ देर बाद चमन आता है । पूर्वाभ्यास स्थल पर कुमार को अकेला बैठा देखकर अपने सहकारियों पर नाराज होता है । यह नाराजगी वह अपने सहकारियों पर अपने एक व्यंग्यात्मक गीत द्वारा प्रस्तुत करता हैं । जैसे -

"चमन : एमेचर हिंदी थिएटर की देखो यह माया,
हो गया वक्त रिहर्सल का, पर कोई नहीं आया ।
घंटे भर से शकुंतला को मिली नहीं है बस,
डायरेक्टर दफ्तर में ओवरटाइम करें बेबस ।
प्रियंवदा को मौसी के घर दावत पर है जाना

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 74*

अनसूया को बच्चों को स्कूल से है लाना ।
दूर्वासा को आज बहुत है बीवी ने डाँटा,
मधुए के आगे अद्धे का आन पड़ा कांटा ।
सूत्रधार ने अपने माफिक रोल नहीं पाया
एमेचर हिंदी थिएटर की ..... ।" [1]

विवेच्य नाटक के सातवे दृश्य के आरंभ में कुमार और कनक एक साथ पास-पास बैठें हैं । कनक कुमार की तरफ आकर्षित होती जा रही हैं। कुमार के मन में भी उसके प्रति प्यार उमड़ रहा है । लेकिन चमन कुमार के व्यक्तित्व को जानता है । इसलिए प्यार के इस खेल में चमन अपने गीत द्वारा कनक को सावधान करना चाहता है । चमन गीत गाना शुरू करता है, --

"नहीं, कदम बढाओ मत्
शकुंतला, नहाओ मत
शची का तीर्थ ठीक है
तलाशे पुण्य ठीक है
ये दर्द का मकाम है
जरा कदम बचा के चल
जरा नजर हटा के चल ।

इन पानियों की पांत में
सितारे तेरी घात में
ये मातमी दहाना है
ये सोग का फसाना है ।
इस चाल में तुम आओ मत
नहीं कदम बढाओ मत ...." [2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 3*
2. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 57*

विवेच्य नाटक के इसी दृश्य के अंतिम भाग में कनक की माँ कनक की शादी के बारे में विचार कर रही है । वह उसके सामने अनेक लडकों के नाम रखती है, लेकिन कनक उन सब लडकों को ठुकराती है। तब नाराज होकर उसकी माँ कहती है - "राम जाने, तेरी खोयी अंगूठी लेकर मछुआ कब आयेगा।"[1] इसी आशय का गीत चमन अपने सहकारियों समवेत गाना प्रारंभ करता है ।

"चमन : कब दरवाजे की सांकल खटकायेगी ?
समवेत : मेरे आंगन में मछुआ कब आयेगा ?
चमन : कितने साजन सुना कहानी चल गये
मुंदरी अपनी छोड निशानी चले गये
नहीं किसी ने मुडकर भी देखा पीछे ।
समवेत : कब आये मछुआ, सूखी खेती सींचे ?

चमन : कणव ऋषि ने गौतमी से नाता जोडा
दुर्वासा ने देख अप्सरा तप छोड़ा
आधी रात नटी का बजता है बिछुआ
समवेत : कब आयेगा मेरे आंगन में मछुआ ?"[2]

विवेच्य नाटक के तेरहवें दृश्य में कुमार और कनक के बीच में शादी के संदर्भ दरार पड गयी है । कुमार शादी के झमेले में नहीं पडना चाहता । तब निराश कनक अपना बच्चा गिरा देती है। इस घटना से कुमार का हृदय द्रवित हो जाता है और वो पश्चाताप के आँसू लेकर कनक के पास आता है । लेकिन कनक उसे स्वतंत्र कर देती है । और थकान के कारण उसे अकेला छोडने के लिए कहती है । कनक की हालत को देखकर चमन इसी आशय का गीत गाना प्रारंभ करता है, ...

"सिरहाने शकुन के आहिस्ता बोलो
अभी टूक रोते-रोते सो गयी है

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 61*
2. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 61-62*

जिगर पे दाग था गहरा जफा का
हवा ए वक्त लेकिन धो गयी है ।

न थी उम्मीद कि दिल भुला देगा
मगर अब धीरे-धीरे हो गयी है
खिलेंगे कभी बेखयाली के बूटे
सदाए गैर जिनको बो गयी है ।" [1]

विवेच्य नाटक के नौवें दृश्य के अंतिम भाग में 'मैनेजर वीस एंड कंपनी के कांट्रैक्ट' के बारे में पूछताछ करता है । उसी बीच उस 'कांट्रैक्ट' के हिसाब में कुमार के हाथ से एक जीरो छूट जाता है । उसी दरमियान कुमार मैनेजर से शादी के लिए अंगूठी मांगता है । तब मैनेजर उसे ताना देता है की शादी के लिए हिसाब आना आवश्यक है और हिसाब के लिए पहाडे याद होना उससे भी ज्यादा आवश्यक है । सुखी जीवन की कुंजी हिसाब है, यह चमन अपने गीत द्वारा कुमार को बताने का प्रयास करता है । जैसे ...

"आठ आठ सोलह है, चार चार आठ
इंद्रजीत भूल गया गिनती का पाठ
अमल कमल विमल बनायें अपना घर
इंद्रजीत फांकता है धूल दरबदर
मानसी के मानस की कुछ नहीं खबर

दो दूनी चार से न बढ सके आगे
आकडों की गुत्थी या दर्द के धागे
गोडो की राह तकें सोते जागें
सुखी जीवन की कुंजी हिसाब है ... " [2]

विवेच्य नाटक में इसी आशय का एक गीत चौदह वें दृश्य के अंत में गाया है । इस गीत में आठ का पूरा पहाडा सुर ताल और लय के साथ सभी कलाकार गातें हैं । इस में चमन भी साथ देता है । कनक

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 106*
2. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 81*

सुदर्शन को अंगूठी पहनाती है, उस वक्त सभी कलाकार उनके आस पास से गोलाकार चक्कर काटते हुये फूल फेंकने का मुकाभिनय करते करते गीत गाना प्रारंभ करते हैं ...

"आठ एकम आठ ... आठ दूनी सोला ...
आठ तिया चौबीस ... आठ चौके
बत्तीस ... आठ पंजे चालीस .... आठ
छक्के आड़तालीस ..... आठ सत्ते छप्पन ...
आठ अट्ठे चौंसट ... आठ नवे बहत्तर ....
आठ धाम अस्सी ..... ।" [1]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि सुरेंद्र वर्मा ने अपने 'द्रौपदी' नाटक में गीतों का प्रयोग प्रच्युरतासे किया हुआ हैं। निष्कर्षत: वह पूर्णत: सफल हुआ है ।

'आठवाँ सर्ग' नाटक में गीत-योजना का कुछ जगह पर प्रयोग अवश्य हुआ है । प्रस्तुत नाटक ऐतिहासिक है । अत: इस नाटक में प्राचीन काव्य पदों का प्रयोग हुआ है ।

प्रस्तुत नाटक के प्रथम अंक के प्रारंभिक दृश्य में प्रियंवदा हाथ में वस्त्रखंड लिए राज भवन में स्थित वस्तुओं की साफ-सफाई कर रही है । नगर में मदनोत्सव होने के कारण प्रियंवदा पूरी खुशी एवं आनंद के साथ सुबह से कार्य व्यवहार कर रही है । उसी वक्त एक कोयल की कूक उसे सुनायी देती है और उसी आवाज को साथ लेकर गुनगुनाने लगती है । जैसे, ...

"द्रुमा: सपुष्पा : सलिलं ... सपं ...
स्त्रिय: सकामा: पवन: सुगान्यि : ...
सर्वप्रिये चारूतरं वसन्ते ... ।" [2]

विवेच्य नाटक के तीसरे अंक के अंतर्गत इसी व्यवहार का आयोजन किया गया है । प्रस्तुत अंक के पहले ही दृश्य में अनसूया रंगों के पात्रों में पानी भरते - भरते उपर्युक्त प्राचीन काव्यपद गुणगुणाती हैं।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ - 113*
2. *सुरेंद वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 17*

यहा नाटककार ने सिर्फ पात्रों की हेरा फेरी की है ओर वही काव्यपद दोहराया है । प्रस्तुत नाटक में इसी एक ही काव्यपद को गीत के नाम पर गुणगुणाया गया है ।

सुरेंद्र वर्मा का 'द्रौपदी' नाटक वर्तमान कालीन हैं । इसके पात्र भी वर्तमान समाज के हैं । अत: प्रस्तुत नाटक पर पाश्चात्यों का प्रभाव दिखायी देता है । इस नाटक के प्रथम अंक में पाश्चात्य गीत की सिर्फ धुन बजायी गयी हैं जो अनील के लिए ठेके से जान पडती है ।

प्रस्तुत नाटक के दूसरे अंक के तीसरे दृश्य में सुरेखा, मनमोहन एवं उनके दो बेटे पार्क में टहलने के लिए गये थे । वहाँ वे तीनों आँखमिचौनी का खेल खेलने लगते हैं । मनमोहन आँख पर पट्टी बाँधे सब को पकड़ने का प्रयास कर रहा है । उसी वक्त यह दोनों बेटे उसके शिकस्तसे छुट जाते हैं । तब बच्चा खुश होकर इसी आशय का बच्चोंवाला गीत गाता है, ...

"अक्कड बक्कड बम्बे बौ
अस्सि नब्बे पूरे सौ
सौ में लाऽगा धाऽगा
चोर निकल के भाऽगाऽ ।" [1]

इस प्रकार से हम देखते हैं कि सुरेंद्र वर्मा के विवेच्य नाटको में भावानुकूल, प्रसंगानुकूल गीत-योजना का पर्याप्त मात्रा में सफलता से प्रयोग हुआ है ।

4.5 बिम्ब विधान और प्रतीक विधान

वास्तव में नाट्यकला सभी कलाओं में सर्वश्रेष्ठ है । अत: चाहे नाटक के संवाद, चरित्र या दृश्यसज्जा हो चाहे प्रकाश हो किसी न किसी स्थिति के अथवा विचार तत्व के प्रतीक ही होतें हैं । "प्रतीक स्वत: ही प्रतीक होतें हैं । प्रतीक सौंदर्य का प्रतिनिधित्व करता है । प्रतीक विधान एक ओर मानव चेतना

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ - 109*

के गहन स्तरोंपर अनुभव किए हुए अवर्णनीय भावों और मानवीय संवेदनाओं को स्थिर और सजीव रूप देता है । तथा दूसरी ओर अनंत विस्तृत अर्थ को शब्दों की परिसिमा में बाँधकर उसे अभिव्यक्ति की क्षमता प्रदान करता है ।''[1]

प्रतीकों के लिए अँग्रेजी में 'सिम्बल' कहा जाता है जिसका अर्थ है - किसी समाष्टि के प्रतिनिधि रूप में और उसकी सब बातों का सूचक होना । चरित्र, संवाद, कृति या संकेत से नाटककार किसी अन्य घटना या प्रसिद्ध उक्ति को बिम्ब द्वारा ही प्रस्तुत करता है । आवश्यकता के अनुसार उसका आभास भी दिखाता है ।

वास्तव में बिम्ब एवं प्रतीकों का उपयोग नाटककार नाटक की गति बनाये रखने, उसे अधिक स्पष्ट एवं सहज करने के लिए करता है । बिम्ब एवं प्रतीक नाटक की संक्षिप्तता, गतिमानता को किस तरह से साहयक सिद्ध होतें हैं, यह सुरेंद्र वर्मा के निम्नांकित नाटकों द्वारा स्पष्ट किया गया है -

'द्रौपदी' नाटक में नया एवं वैशिष्ट्यपूर्ण प्रयोग किया है । इस नाटक में मनमोहन प्रतीकात्मक पात्र है । उसके खण्डित व्यक्तित्व के चार रूप हैं, जो लाल, काले, पीले एवं सफेद रंगों में विभाजित हैं । इस में लाल नकाबवाला उसके बुराई का प्रतीक है सफेद नकाबवाला मनमोहन के सभ्य, शिक्षित एवं सुसंस्कृत व्यक्तित्व का प्रतीक है और पीले नकाबवाला उसके दफ्तरवाले व्यक्तित्व का प्रतीक है । नाटककार ने नाटक की नायिका सुरेखा को पाँच व्यक्तित्व वाले पति के पत्नी के रूप में अर्थात महाभारतकालीन द्रौपदी के रूप में प्रतिबिम्बित किया है ।

अत: स्पष्ट हैं कि प्रस्तुत नाटक में मनमोहन के चार नकाब और सुरेखा को द्रौपदी के रूप में प्रस्तुत कर दृश्यात्मकता की साहयता से बिम्बात्मकता को प्रभावशाली बनाने का प्रयत्न किया है ।

सुरेंद्र वर्मा के 'सेतुबंध' नाटक में चंद्रगुप्त की बेटी प्रभावती में आज के या वर्तमान स्त्री की विचारों का प्रतिबिम्ब दिखायी देता है । प्रस्तुत नाटक में प्रभावती शादी से पहले अपने शिक्षक कालिदास से प्यार

---

1. *रमेश गौतम - हिंदी के प्रतीक नाटक , पृष्ठ - 19*

करती थी । इसी दरमियान राजकीय स्वार्थ हेतु उसकी शादी वाकटक नरेश रूद्रसेन से हो जाती हैं । तब कालिदास प्रभावती को शादी में भेंट के रूप में 'मेघदूत ' की पाण्डुलिपि देता है । यह देखकर प्रवरसेन के मन में अपने माँ के प्रति तिरस्कार जागता है । अत: वह अपनी माँ से आरोपात्मक भाषा में कहता है -

"प्रवरसेन : (तिव्र स्वर में) लेकिन तुमने वैवाहिक मर्यादा का उल्लंघन किया । पति के होते हुए पर पुरुष को चाहना ।

प्रभावती : परंपरागत शब्दों को छोड दो । क्या कोई ऐसी स्थिति नहीं हो सकती, जिसमें पर पुरुष पति बन जाए और पति परपुरूष?" [1]

प्रभावती के इस संवाद द्वारा ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान काल के स्त्री के विचार और गुप्तकाल की प्रभावती इन दोनों के विचारों में पर्याप्त समय दिखायी देता है । अत: प्रभावती वर्तमानकालीन स्त्री का प्रतिबिम्बित रूप है ।

सुरेंद्र वर्मा का 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक के प्रतीक अत्यंतिक सरल एवं भाव संप्रेषित हैं । इस नाटक में ओक्काक के अंतर्द्वन्द्व को अभिव्यक्त करने के लिए मदिरापान का रंग प्रतीक अनेक जगह प्रस्तुत है - "ओक्काक का मदिराकोष्ठतक जाना, चजक भरणा और कुछ घूँट लेना ।" [2]

नाटककार ने 'चक्रवाक पक्षी' की ध्वनि का प्रतीक लेकर ओक्काक की व्याकुलाहट को प्रतिकात्मक ढंग में प्रस्तुत किया है । जैसे - "चक्रवाक पक्षी है महाराज ! ... महादेवी के हाथों से मृणाल का रस नहीं मिला, उनका स्वर नहीं सुना, इसलिए व्याकुल है ।

"ओक्काक : ओह ... ! (गवाक्ष तक आ जाता है ।) चारो जागेंगे सारी रात चक्रवाक ... मैं ... कुमुदनी .... और चंद्रमा ... ।" [3]

यहाँ नाटककार ने कुमुदनी और चंद्रमा के प्रतीक के द्वारा ही मिलन की बेलापर और चक्रवाक और मैं के द्वारा विरह की बेलापर प्रतिकात्मक ढंग से सोचने का प्रयास किया है । पूरे नाटक के अंतर्गत

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ - 31*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 33*
3. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 37*

रात का बिम्ब उभरता है । जो यौन संबंधों का प्रतीक बनकर दर्शक या पाठकों को सोचने पर मजबूर करता हैं ।

'आठवाँ सर्ग' नाटक इस युग की एक विशिष्ठ उपलब्धि है । आज के रचनाकार या साहित्यकार की अभिव्यक्ति, स्वतंत्रता की पीडा है, जो व्यवस्था के चौखट में दम तोडने के लिए विवश है ।

सम्मान समारोह के दिन 'आठवें सर्ग' पर अश्लीलता होने के कारण कालिदास का अपमान होता है । यहाँ उसे शासनकर्ता का भी साथ नहीं मिलता । शासनकर्ता अन्य लोगों के दबाव में आकर कालिदास के साथ सही निर्णय नहीं करता । लेकिन सत्ता के साहयता बिना ही कालिदास द्वारा रचित 'अभिज्ञान शाकुंतल' जनता के द्वारा महान काव्य कहलाया जाता है । अत: इस राज्य के और तीन साल पहले राज्य सत्ता का प्रतीक चंद्रगुप्त है जो अन्य लोगों के दबाव के कारण विवश है । लेकिन यहाँ साहित्यकार की स्वतंत्रता पर रोक लगाने का प्रयास अन्य लोगों के माध्यम से चंद्रगुप्त ने किया है - "जीवन के एक मोड पर सात्ता की साहयता की अवश्यकता थी ...अब नही हैं । ... अब ? ××× तो लोकमत उसके विरूद्ध आषाढ के काले - कजरारे मेघों के समान भडक उठेगा ।"[1]

यहाँ नाटककार ने चंद्रगुप्त के प्रतिकात्मक रूप के विरूद्ध कालिदास जैसे साहित्यकार के माध्यम से आधुनिक साहित्यकारोंके बिम्बात्मकता को प्रभावशाली बनाने का कार्य किया है ।

सुरेंद्र वर्मा ने 'शकुंतला की अंगूठी' नाटक के अंतर्गत बिम्ब-प्रतीक विधान का नया एवं वैशिष्ट्यपूर्ण प्रयोग किया है । प्रस्तुत नाटक की नायिका कनक शकुंतला का प्रतिबिम्बित रूप है । और उसका प्रतीक निरंजन का कबुतर है जो अपने जोडीदार के खो जाने के एहसास में अकेला एवं निराश है ।

'अभिज्ञान शाकुंतल' की शकुंतला और कनक जीवन में बहुत कुछ मात्रा में साम्य हैं । यहाँ फर्क सिर्फ इतना ही है कि अंगूठी मिल जाने पर दुश्यंत शकुंतला को अपनाता है लेकिन यहाँ आधुनिक दुश्यंत (कुमार) शकुंतला से ही (कनक) अंगूठी लेकर उसके साथ शारीरिक संबंध बनाकर उसे गर्भवती बनाता है और अपनाने से इन्कार करता है और उसकी अंगूठी भी वापस करता है । जैसे -

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 9*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 72*

कुमार : यह सिर्फ बंदिश ही नहीं । इसमें कहीं सुकून भी है ।

कनक : तो साफ क्यों नहीं कहते तुम की किसी बंदिश में नहीं पडना चाहते ?''[1]

अत: यहाँ स्पष्ट है कि इस कनक का कबुतर एक प्रतीक रूप हैं । प्रस्तुत नाटक में शकुंतला के प्रतिबिम्बित रूप को कनक के द्वारा स्पष्ट करने का नाटककार ने वैशिष्ट्यपूर्ण एवं सफल प्रयोग किया है ।

इस तरह सुरेंद्र वर्मा ने अपने सभी नाटकों में बिम्ब एवं प्रतीक योजना का प्रयोग प्रच्युर मात्रा में एवं सफलता के साथ किया है ।

4.6 संवाद योजना :

संवाद नाटक का अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्व है । यदि अभिनय नाटक का प्राणतत्व माना जाए तो संवाद अभिनय का प्राण हैं । नाटक में पात्रों के आपसी वार्तालाप को संवाद कहतें हैं । संवाद का वाणी या भाषा के साथ गहरा संबंध है । नाटक की अधिकांश सफलता संवाद योजना पर ही अवलंबित होती हैं । बहुत से नाटक कला की दृष्टि से बहुत उच्च कोटी के न होते हुए भी संवाद के बल पर सफल हो जातें हैं । संवाद योजना के आवश्यक गुण हैं - संप्रेषणीयता, स्वाभाविकता, पात्रानुकूलता, विषयानुकूलता, प्रवाहमयता, संक्षिप्तता आदि । सुरेंद्र वर्मा के सभी नाटक संवाद-योजना की दृष्टि से सफल हैं ।

सुरेंद्र वर्मा का 'शकुंतला की अंगूठी' नाटक संवाद की दृष्टि से एक सशक्त नाटक बन गया है । नाटक के सारे चरित्र भारत के किसी भी नगर के रंगकर्मी हो सकतें हैं । प्रस्तुत पात्र केवल 'अभिज्ञान शाकुंतल' नाटक के संवाद शुद्ध हिंदी में बोल रहे हैं । एक स्थानपर उसमें परिवर्तन होता है तो निर्देशक द्वारा अभिनेता को दुत्कार खानी पडती हैं । नाटककार निम्नांकित संवाद द्वारा रंगकर्मियों की भाषा को भी बिम्बित करना चाहता हैं । जैसे -

''टाईगर : कहो तुम्हारी तपस्या तो मजे में चल रही हैं ?

---

1. सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 88,89

कुमार : यह क्या डायलॉग बोल रहे हैं आप ?

(टाईगर अपना आलेख देखता है ।)

टाईगर : स्क्रिप्ट में है ... ठीक से चल रही है । लेकिन मजे में भी चलेगा । बोलचाल की जुबान है । सब लोग कहते हैं, मजे में हैं न आप ?

कुमार : नाटक का पीरिएड इसा के पहले चौथी सदी का । इस में मजा जैसा उर्दू लफ़्ज नहीं खप सकता । जो नाटक में है, वही बोलिए ।''[1]

नाटककार ने शाकुंतल नाटक के संस्कृत संवादों का स्वतंत्र रूप में अनुवाद किया है । इस नाटक के संवाद चुस्त, छोटे, चरित्र की मानसिक तथा चारित्रिक पहचान कराने में सक्षम एवं प्रभावी हैं । अभिनेताओं के लिए मंचीय परिप्रेक्ष्य में सहज, सूलभ और स्मरण के लिए आसान है ।

नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने 'द्रौपदी' में चित्रित सुरेखा को महाभारतकालीन द्रौपदी से पूर्णत: भिन्न दिखाया है । वह अपने एक पति के पाँच रूपों के साथ समझौता करते - करते संत्रस्त हो गयी हैं । पति की विसंगतियों का एवं विविध मनोवृत्तियों का पता सुरेखा को नाटक की शुरूआत में ही होता है । जैसे -

''सुरेखा : (क्रोधपूर्वक) इस तरह किसी के घर में घुस जाने का क्या तात्पर्य है ?

चारों : (शांती से)हम किसी के घर में नहीं घुसे, अपने ही घर में घुसे हैं ।

सुरेखा : यह क्या प्रलाप है ? - कौन हो तुम लोग ?

चारों : हम वही हैं, जो (मनमोहन की ओर संकेतसहित) ये हैं ।

सुरेखा : (खीझी हुई) लज्जा नहीं आता तुम लोगों को ? ये मेरे पति हैं ।

चारों : (दोनों कानोंपर हाथ रख, ऊँचे स्वर में) चुप रहो ! ऐसे पाप के बोल मत बोलो × × × × × बोलो - बोलतें क्यों नहीं ।''[2]

इन संवादों द्वारा सुरेखा की मनस्थिति, उसके मन की कटुता, आपने आप से घृणा, तथा उसके मानसिक अवस्था का दर्शन होता है ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 9*
2. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ - 75*

उपर्युक्त संवाद से नाटककार ने यह बताने का प्रयास किया है कि भारतीय व्यक्ति पाश्चात्य और भारतीय संस्कारों से पूर्णत: सम्मीश्र बन बैठा है । इसलिए प्रस्तुत नाटक के संवाद आधुनिक तथा लचिले बन गये हैं ।

'आठवाँ स्वर्ग' नाटक संवाद की दृष्टि से बडा प्रभावी बन गया है । इस नाटक की संवाद-योजना बडी मार्मिक एवं नाट्यानुकूल है । वास्तव में सुरेंद्र वर्मा मनोवैज्ञानिक नाटककार हैं । उन्होंने अपने सभी नाटकों में पात्रों की मन:स्थिति का चित्रण संवाद द्वारा ही किया है । निम्नांकित संवाद द्वारा कालिदास के मन:स्थिति का चित्रण किया है -

"धर्माध्यक्ष : अगर आप सोच-विचार करना चाहते हैं, तो आपको दो दिन का समय दिया जाता है । × × × कि क्या आप क्षमा-याचना के लिए प्रस्तुत हैं ?

कालिदास : (तीव्र स्वर में) नहीं ।

धर्माध्यक्ष : और अधिक समय चाहिए ।

कालिदास : एक शताब्दी में भी नहीं । --- मैं वहाँ जाऊँगा ?तुम्हारी उस अन्धी समिति के सामने ? × × × × मैं विष खा लूंगा, विष-डूब मरूँगा शिप्रा में --- लेकिन किसी भी मूल्य पर --" [1]

उपर्युक्त संवादों से कालिदास की मन:स्थिति का स्पष्ट चित्रण होता है । नाटककार का संवादशिल्प प्रस्तुत नाटक में एक अभिनव प्रयोग हैं । जो पूरे नाटक में स्पष्ट रूप में दृष्टिगोचर होती है ।

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक ऐतिहासिक पृष्ठभूमिपर आधारित है । नाट्यगत पात्रों के मानसिक संघर्ष, तनाव,बिखराव को अभिव्यक्त करने के लिए इस नाटक के संवाद बहुत सफलता प्राप्त कर चुके हैं । प्रस्तुत संवाद ओक्काक के मन:स्थिति के दर्शन करातें हैं जो राज्यमंत्री मंडल के दबाव से लिया जा रहा है -

---

1. सुरेंद्र वर्मा - आठवा सर्ग, पृष्ठ - 49, 49

"राजपुरोहित : कहिए महाराज ।

महबलाविकृत : कह दीजिए ।

महामात्य : (अधिक निकट आते हुए, ढंडे स्वर में) समय हो रहा है, महाराज ।

ओक्काक : (यकायक फूट पडता है ।) कह तो दिया है । (झपट कर कोष्ठ के पास जाता है, गटागट मदिरा पीने लगता है ।)"[1]

शीलवती जब प्रतोष के साथ एक रात काम-क्रीडाओं के उपरांत वापस अपने महल आती हे तब ओक्काक उसकी भर्त्सना करता है कि "राजमहिषी धर्मनटी बनकर गयी थी, कामनटी बनकर लौटी है ।"[2] इस समय पति-पत्नी में जो संघर्ष दिखायी देता है वह बहुत तनाव पूर्ण है । जैसे "शीलवती : यह शयनकक्ष साक्षी है मेरी पीडा का --- ये भीत्तियाँ और गवाक्ष ---यह मुक्तालाप × × × नग्न नारीत्व से अपने पुरषत्व को जाग्रत करना चाहते थे - अलिंगनों से, चुम्बनों से, स्पर्शों और नखचिन्हों से ---- × × × तुमने कभी जाना है रीते - हाथों वापसी की उस यातना को ? "[3] इन संवादों में शीलवती के मन की व्यथा, कुंठा तथा हालत स्पष्ट रूप से उभारती है । शीलवती के संवादों की दृतगति उसकी मानसिक स्थिति को सूचित करती है ।

जयदेव तनेजा के मतानुसार - "ओक्काक की पीडा, घुटन, छटपटाहट, ग्लानी उसके संवादों और क्रिया-कलापों में सजीव हो उठी है । "[4] अत: सुरेंद्र वर्मा ने प्रस्तुत नाटक में पात्रों की मन:स्थिति और कार्यव्यापार को अभिव्यक्त करने के लिए लंबे संवादों की सार्थक योजना की है ।

सुरेंद्र वर्मा के 'सेतुबंध' नाटक के संवाद ऐतिहासिक होकर भी केवल आधुनिक ही नहीं अत्याधुनिक लगते हैं । जो बेटा अपने माँ के प्रेमप्रसंगों की चर्चा अपने माँ और पत्नी के सामने करने में धृष्टता नहीं समझता, वह आधुनिक समाज का ही अंग लगता है । जैसे -

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 24*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 53*
3. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 24*
4. *जयदेव तनेजा - आज के हिंदी रंगनाटक, पृष्ठ - 142*

"प्रवरसेन : (तीव्र स्वर में) लेकिन तुमने वैवाहिक मर्यादा का उल्लंघन किया है। पति के होते हुए परपुरूष को चाहना।

प्रभावती : परंपरागत शब्दों को छोड दो। क्या कोइ स्थिति ऐसी नहीं हो सकती जिसमें परपुरूष पति बन जाए और पति परपुरूष।"[1]

नाटककार ने उपर्युक्त संवाद द्वारा भारतीय नारी के आधुनिक रूप को स्पष्ट किया है। अत: स्पष्ट है कि प्रस्तुत नाटक को सुरेंद्र वर्मा ने मानसिक घुटनात्मक, प्रेमात्मक, ममतात्मक, विद्रोहात्मक तथा व्यंग्यात्मक संवादों द्वारा प्रभावशील तथा गतिशील बना दिया है।

4.6.1 संवाद का वैविध :

सुरेंद्र वर्मा के नाटक संवाद-योजना की दृष्टि से अत्यंत सफल हुए हैं। विवेच्य नाटकों में प्रयुक्त संवाद वैविध पूर्ण हैं जो सरल, सुबोध, पात्रानुकूल एवं भावानुकूल हैं। नाटककार संवाद-योजना में अधिक सतर्क दिखायी देता है। निम्नांकित संवादों के प्रकारों से नाटककार की सतर्कता दृष्टिगोचर होती हैं-

4.6.1.1 उपमात्मक संवाद :-

सुरेंद्र वर्मा ने अपने 'आठवाँ सर्ग' नाटक में उपमात्मक संवादों का प्रयोग किया है। इससे संवाद रसयुक्त तथा मधुर बन पडें हैं। प्रस्तुत नाटक के प्रियंवदा और अनसूया के बीच ऐसे संवाद दृष्टिगोचर होते हैं। जैसे -

"प्रियंवदा : अनसूये!

अनसूया : प्रियंवदे!

अनसूया : वही, जो हर दिन देखती हूँ----।

: कुछ विशेष नहीं, सुन्दरी? नहीं तो।--- ऐसा क्या है, सुमुखि?

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 21,23*

प्रियंवदा : क्या - क्या ?

(कृत्रिम भोलेपन से) वही, जो हर दिन देखती हूँ

हंसगति-देहलता, मुखचंद्र - चबुषभ्र, अधर पल्लव मृगनैन ----

प्रियंवदा : कुछ विशेष नहीं, मेनके ?

अनसूया : नहीं तो ! ऐसा क्या है, उर्वशी ? ''[1]

इस तरह उपर्युक्त संवादों द्वारा एक दूसरे को मिली हुयी उपमाओं का नाटककार ने लयबध्दता एवं मधुरता के साथ चित्रण किया है ।

4.6.1.2 सूचनात्मक खण्डित संवाद :

सुरेंद्र वर्मा ने अपने कुछ नाटकों में सूचनात्मक खण्डित संवादों का प्रयोग बडी सरलता के साथ किया है । उनके 'सूर्य की अंतिम किरण से पहली किरण तक' नाटक के दूसरे अंक के अंतिम दृश्य में आर्य प्रतोष और शीलवती के बीच जो मिलन सुख का चित्रण किया है, वह निम्नांकित संवाद द्वारा सूचित होता है -

''प्रतोष : शी ऽ ऽ ऽ ल !

विराम ।

शीलवती : हूँ-----!

विराम ।

प्रतोष : चुप क्यों हो --- ?

विराम ।

शीलवती : नहीं तो ---- ।

हँसी ।

प्रतोष : कुछ बोलो --- ?

शीलवती : ऊँ ऽ ऽ हूँ---- ।

विराम

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 77*

प्रतोष : दीप जला दूँ --- ?

शीलवती : नहीं --- सब कुछ बदल जाता है प्रकाश के साथ --- ।''[1]

उपर्युक्त संवादों के संदर्भ में गोविंद चातक लिखते हैं - ''विराम, संवाद की चरम स्थिति है, जहाँ शब्द चूक जाते हैं या व्यर्थ लगने लगते हैं । सुरेंद्र वर्मा ने संवादों के बीच विराम की स्थितियों को बडी बहुलता से प्रयोग किया हैं ।''[2]

4.6.1.3 एकालाप संवाद :

सुरेंद्र वर्मा ने 'द्रौपदी' नाटक के अंतर्गत एकालाप संवादों का बडी सरलता एवं विशिष्टता से प्रयोग किया है । प्रस्तुत नाटक के प्रथम अंक के प्रारंभ में ही नाटक की नायिका सुरेखा मंच पर अकेली ही है और अपने परिवार के सदस्यों का बारी-बारी से परिचय करवा रही है । जैसे -

''सुरेखा : (मंद मुस्कान से) ओह, क्षमा कीजिएगा, मुझे ध्यान ही नहीं रहा कि आप लोग प्रतीक्षा कर रहे हैं । मैं अपने आप में ही इतनी उलझी हुई थी कि (सिट झटकती है । उठती है । कप लिए हुए आगे आने लगती है ।) हाँ, तो पहचान लीजिए मुझे । मैं हूँ इस नाटक की नायिका - मेरा नाम सुरेखा है । ××× ओह मैने तो आपको बतलाया ही नहीं । मेरी एक लडकी है । नाम है उसका अलका । आसपास के लोगों ने उसे लकी कर दिया हैं । ××× ओह, मैंने तो आपको बताया ही नहीं । मेरे एक पति हैं नाम है उनका मनमोहन । निकट के लोगों ने उसे मनी कर दिया है । ... यही - मुझे कोई आपत्ति नहीं ।''[3]

'द्रौपदी' नाटक के इन संवादों से एक आत्मीयतापूर्ण वातावरण की सृष्टि होती है । कथावस्तु का संकेत इसी स्थल से शुरू होता है । अत: इन संवादों में मार्मिकता का अहसार झलकता है ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सूर्य की अंतिम रिणस से सूर्य की पहली किरण तक, पृष्ठ - 52*
2. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ 73, 74, 75*

4.6.1.4 टेलीफोन द्वारा संवाद :-

सुरेंद्र वर्मा ने 'द्रौपदी' नाटक के अंतर्गत संवाद साधने के लिए टेलीफोन का अच्छा उपयोग किया है । मनमोहन, सुरेखा, मैनेजर इन के संवाद टेलीफोन द्वारा इस प्रकार स्पष्ट होते हैं -

"सुरेखा : हैलो - सुरेखा बोल रही हूँ ।
(दूसरे टेलीफोन पर आलोककृत उभरने लगता है ।)
मैनेजर : नमस्ते - मैं बोल रहा हूँ - चोपरा - क्या मोहन साब घर में हैं ?
सुरेखा : जी हाँ । बुलाती हूँ । जरा एक मिनट (मेज की ओर मुडकर) तुम्हारे मैनेजर -
मनमोहन : मैं बोल रहा हूँ मैनेजर ।"[1]

इस प्रकार से सुरेंद्र वर्मा ने 'द्रौपदी' नाटक में वैज्ञानिक युग के इस आधुनिक साधन का उपयोग सहजता से किया है । अत: प्रस्तुत नाटक में टेलीफोन द्वारा संवाद साधने का नाटककार का प्रयोग सफल परिलक्षित होता है ।

4.6.1.5 छोटे एवं लघु संवाद :-

सुरेंद्र वर्मा के सभी नाटकों में अनेक स्थानोंपर लघु संवादों का प्रयोग किया है । 'आठवाँ सर्ग' नाटक के कुछ दृश्यों में लघु संवाद सफल बन पडे हैं । प्रस्तुत नाटक के प्रथम अंक में प्रियंगु और अनसूया के वार्तालाप द्वारा लघु संवाद स्पष्ट होतें हैं -

"प्रियंगु : अनसूया ।
अनसूया : देवि !
प्रियंगु : तनिक दर्पण तो ला !
(अनसूया का प्रस्थान । विराम । अनसूया का प्रवेश)
अनसूया : देवि !

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ 77*

प्रियंगु : (बिना मुड़े) रख दें !

(दर्पण चौकी पर रखकर चली जाती है ।)

: अनसूया

(अनसूया का प्रवेश)

अनसूया : देवि !

प्रियंगु : प्रियंवदा कहाँ है ?

अनसूया : उद्यान में है, देवि ! -- तिलकपर्णिका चुन रही है । -- क्या बुलाऊँ ?

प्रियंगु : नहीं --- !''[1]

4.6.1.6 लंबे संवाद :-

सुरेंद्र वर्मा के लगभग सभी नाटकों में लंबें संवादों को स्थान प्राप्त हैं । उनके सभी नाटकों के पात्रों की मन:स्थिति को अभिव्यक्त करने के लिए लंबे संवादों की सार्थक योजना की हैं । 'आठवाँ सर्ग' में प्रियंगु-मंजरी ने जो संवाद प्रकट किए हैं उसमें उसकी मन:स्थिति का परिचय मिलता है । जैसे -

''प्रियंगु :- (कोमल स्वर में) मुझे दूर रहने का दंड क्यों दे रहे हो ? --- मैनें क्या अपराध किया है ? --- (प्रगल्भ मुस्कान से) प्रियंगु तो यहीं रहेगी --- तुम्हारे पास ! × × × मुस्करा क्यों रहे हो ? तुम्हें प्रियंगु की बात पर विश्वास नहीं होता ? अच्छा तो कल ही किसी ज्योतिषी को बुलाकर उसका हाथ दिखला देना । --- तब तो मानोगे ? × × × प्रियंगु लज्जित होती है, तो तुम सुख पाते हों ? प्रियंगु का अपमान होता है, तो तुम्हारा स्वास्थ्य बढता है ? --- कहो कि अब ऐसा नहीं करोगे ? उसे अपने साथ ले जाओगे × × × --- जैसे ऋतुसंहार में छों ऋतुओं का विवरण --- जैसे मेघदूत के बहुत सारे अंश --- और अब --- (सहसा अटक जाती है ।) ''[2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 25,26*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 29,50,51*

उपर्युक्त दिर्घ एवं लंबे संवाद से नाटककार ने अभिनेता के संपूर्ण मन:स्थिति का चित्रण किया है । इसने पात्र के मन के पूर्ण भाव स्पष्ट होते हैं । इस प्रकार की संवाद योजना से नाटककार ने संपूर्ण नाटकीय संवादों का रूप बदल दिया है ।

4.6.1.7 सांकेतिक संवाद : -

'आठवाँ सर्ग' नाटक के दूसरे अंक के पहले दृश्य में कालिदास के 'कुमारसंभव' के उपलक्ष्य में आयोजित सम्मान समारोह की सभा को प्रत्यक्ष न दिखाकर अनसूया और प्रियंगुमंजरी के संवाद द्वारा चित्रित किया है । इससे दर्शकों को सभा का आभास होता है - ''अनसूया :- कविवर ने अपना प्रारंभिक वक्तव्य दिया, कथानक की संक्षिप्त रूपरेखा बतलाई । फिर काव्य-पाठ प्रारंभ किया --- मंडप में ऐसा सन्नाटा था, जैसे वह बिल्कुल निर्जन हो । × × × पृष्ठ के बाद पृष्ठ --- जैसे समय भी एक कोने में सम्मोहन से बँधा खडा था ---।''[1]

इस संवाद के द्वारा सभा के आयोजन के संकेत मिलते हैं । इस प्रकार वर्मा के नाटकों के संवादों में विविधता, मर्मस्पर्शिता, एवं साधारणीकरन की शक्ति मौजूद हैं । विविध प्रकार के ये संवाद पात्रानुकूलता, प्रसंगानुकूलता, नाट्यानुकूलता तथा भावानुकूलता को दर्शाने में सफल हुए हैं ।

4.7 प्रकाश योजना :-

रंगमंच की दृश्य सज्जा में प्रकाश व्यवस्था का अधिकाधिक योगदान होता है । अभिनय कला की गति और लय को स्पॉट लाईट के माध्यम से कलात्मक रूप से प्रतिबिम्बित किया जाता है । प्रकाश-वस्तु, स्थल व्यक्ति आदि को दृश्यमान बनाता है । आज विविध प्रकाश उपकरणों द्वारा अभिनेता के हावभाव, अंर्तद्वन्द्व, मानसिक घात- प्रति-घात आदि को उजागर किया जाता है । आज सायक्लो रामा के माध्यम से रंगमंच पर सूर्योदय, सूर्यास्त, तूफान आदि सभी को साईड - प्रोजेक्ट की साध्यता से दिखाया जाता है ।

---

1. सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 38

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्रकाश-योजना नाटकीय घटना, प्रसंग,मानव मन को प्रदर्शित करनेवाला महत्त्वपूर्ण तत्व है । अत: प्रकाश यंत्रों की उपलब्धि ने आधुनिक रंगमंच के भविष्य को उज्ज्वल बनाया गया है । सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में प्रकाश व्यवस्था विषयक तत्व का बडी कुशलता के साथ उपयोग किया हैं। जैसे ----

'द्रौपदी' नाटक के अंतर्गत आयोजित प्रकाश- योजना आधुनिक रंगमंच के लिए नयी देन है । नाटक के प्रथम अंक में एक ही कक्ष में विविध उपकरणों की साध्यता से प्रकाश प्रस्तुतिकरण के यंत्रों के माध्यम से अनेक दृश्यों को दिखाया है । नाटक में चार नकाबों का प्रस्तुतिकरण प्रकाश योजना की सफलता का द्योतक है । इससे नाटक की सफलता का उत्कर्ष हुआ है ।

प्रस्तुत नाटक के अंतर्गत स्थान दृश्यों का प्रयोग किया है । प्रकाश योजना के अंतर्गत आईस्क्रिम खानेवाले मुन्ना मुन्नी को दिखाकर फ्लॅश बॅक के माध्यम से मनमोहन के परिवार के अतीत के सुर की झलक दिखायी है -

"सुरेखा	:	(स्मृतियों में डूबी सी) पहले दोनों कितनी जिद् करते ये साथ चलने की ।
मनमोहन	:	(उसी प्रकाश) पहले ...
सुरेखा	:	आईस्क्रिम ... चाट ... छोले ... भटूरे ...
मनमोहन	:	चिडीयाघर ... पण्डारा पार्क ... सप्रू हाऊस में बच्चों को फिल्म ... ।" [1]

प्रस्तुत नाटक में प्रकाश- योजना के माध्यम से पारिवारिक दृश्यों को विशिष्ट रूप में रखा के यथार्थ को और भी गहरा रंग देने का प्रयत्न किया गया है । सुषमा बेदी के शब्दो में - "आधुनिक मंचीय साधनों में प्रकाश वृत्तों का विशेष महत्त्व है।" [2]

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ - 85*

'सेतुबंध' नाटक में नाटककार ने प्रकाश-योजना के माध्यम से पात्रों की मानसिकता, अंतर्द्वंद्व, पीडा और भाव-भावनाओं को रेखांकित करने का प्रयत्न किया है । नाटक में आलोक वृत्त और व्यक्तियों का यांत्रिक ढंग से प्रवेश और प्रस्थान दिखाया है । जैसे -''(पीछे आलोकवृत्त और पाँच व्यक्तियों का यांत्रिक ढंग से प्रवेश ।)

पहला : प्रवरसेन विराट कल्पना के, सौदर्य के कवि हैं ।

दूसरा : मानवीय मनोभावों के चित्रण की दृष्टि से प्रवरसेन अनुपम हैं ।

तीसरा : जहाँ तक चित्रात्मक शैली के उत्कर्ष का प्रश्न है, प्रवरसेन अतुलनीय है ।

चौथा : सेतुबंध में वीर, रौद्र और अद्‌भूत रसों का व्यापक प्रयोग है ।

पाँचवा : सेतूरचना का पूरा प्रसंग प्रकृति की नयी उद्‌भावना से संयोजित है ।

पहला : रामकथा के प्रसिद्ध ----

दूसरा : और प्रचलित पात्र होकर भी

तीसरा : प्रवरसेन के पात्र

चौथा : उनके मौलिक पात्र है ।

(प्रकाशवृत्त के बुझने के साथ पाँचो का यांत्रिक ढंग से प्रस्थान ।)''[1]

इसके साथ ही सायक्लोरामाका छायाकृति दिखाने के लिए वैशिष्ट्य पूर्ण प्रयोग किया है । जैसे - ''- (सायक्लोरामा पर कालिदास की छायाकृति दिखायी देती है ।)

कालिदास : प्रवरसेन महाराष्ट्री प्राकृत के कालिदास है । ---

प्रवरसेन में सुक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति है ।

प्रवरसेन में गहरी अंर्तदृष्टि है । -- प्रवरसेन में तरल संवेदनशीलता है।

(पीछे अंधकार हो जाता है ।)''[2]

इस तरह सायक्लोरामा द्‌वारा किया गया प्रयास प्रकाश व्यवस्था की दृष्टि से नयी उद्‌भावना है । कहीं कहीं नाटककारने प्रकाशवृत्त के बुझ जानेपर कई दृश्यों को दिखाने का संकेत दिया है ।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ - 36,37*
2. *सुरेंद्र वर्मा - सेतुबंध, पृष्ठ - 37*

उदा. प्रभावती द्वारा कालिदास लिखित मेघदूत की पांडूलिपि को सीने से लगाकर व्याकुल होना, अपने बेटे प्रवरसेन में कालिदास की प्रति कवि देखना आदि घटनाएँ इस बात की गवाही देती हैं ।

'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक की प्रकार योजना ओक्काक, शीलवती और आर्यप्रतोष के मनोभावों को वैज्ञानिक ढंग से उभारणे का प्रयास करती हैं । ओक्काक के राजप्रसाद के शयनकक्ष को केवल प्रकाशपरिवर्तन के द्वारा प्रतोष के शयनकक्ष में बदल देने में नाटककार की प्रकाश योजना संबंधी सतर्कता दिखाई देती हैं । प्रस्तुत नाटक में आर्य प्रतोष और शीलवती की काम-क्रीडाएँ नाटककार ने रंगमंचपर धीमें प्रकाश में दिखाने का उत्कृष्ट प्रयास किया है । उसके बाद अंधकार दिखाकर उन दोनों के प्रस्थान के साथ ही ओक्काक और महत्तरिका का प्रवेश दिखाया है । यहाँ नाटककार ने ओक्काक की मन:स्थिति का दर्शन कराने के लिए कभी एकवृत्तिय आलोक, कभी वृत्तिय आलोक तो कभी पूर्वालोक का आयोजन किया है । इस दृष्टि में प्रकाश योजना में भावानुकूल और प्रसंगानुकूल दृष्टिगोचर होते हैं ।

नाटक के प्रथम अंक में धीरे धीरे प्रकाश होता है । और नेपथ्य में मंगल ध्वनि दिखाई देती हैं । नाटक के द्वितीय अंक में मंच का प्रकाश क्रमश: मंद होते हुए बुझ जाता है । केवल गवाक्ष पर चंद्र किरणों सा बहुत घूमिल आलोक रहता है । मंचपर धीरे - धीरे प्रकाश होता है और ओक्काक एवं महत्तरिका के स्थान पर प्रकाश परिवर्तन द्वारा शीलवती और प्रतोष दिखाई देते हैं । नाटक का दूसरा अंक प्रकाश व्यवस्था का एक सफल नमूना हैं । इसी तरह की प्रकाश व्यवस्था तीसरे अंक में प्रारंभ में मंचपर अंधकार है और पुरुषाकृति का धीरे धीरे टहलने का आभास हो रहा है । इतने में हडबडायी हुयी महत्तरिका प्रवेश करके उसी आवेश में ओक्काक को बताती हैं, ...

> "महत्तरिका : (आवेश में) बधाई हो, महाराज ! ... उजाला ! ... प्रकाश आलोक ।
> (पूर्ववर्ती तीनों शब्दों के साथ तत्क्षण तीन बार में - पूरा मंच आलोकित हो जाता है ।" [1]

इस नाटक के तीसरे अंक कें अंत में ओक्काक शीलवती के दरमियान संघर्ष दिखाया गया है । जब

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 22*

ओक्काक शीलवती को स्वार्थी कहता है, तब शीलवती उसे स्वार्थी कौन है यह बताकर ओक्काक पर एक व्यंग्यबाण छोड़ती है । जैसे ''यह शयनकक्ष साथी है मेरी पीडा का ...यह शैय्या ... मेरी पूरी चेतना प्रत्युत्तर देती थी ... तो तुम वही खड़े थे - ठंड़े, निस्तेज ... बिना किसी उपलब्धि के, बिना किसी प्राप्य के, बिना किसी तृप्ति के ...बोलो ... कौन स्वार्थी है ? ... तुम की मैं ? '' [1]

इस संघर्ष के समय नाटककार ने प्रकाश को तीन प्रकारों से व्यक्त किया है । कभी शीलवती पर, कभी ओक्काक पर तो कभी शैय्यापर ।

सुरेंद्र वर्मा के नाटक के अंतर्गत प्रस्तुत प्रकाश व्यवस्थ के संदर्भ में जयदेव तनेजा की यह राय महत्त्वपूर्ण लगती हैं, 'उसने दृश्यबंध को अवश्यकता नुसार पर्याप्त लचीला बनाकर ओक्काक तथा महत्तरिका और प्रतोष तथा शीलवती के दो दो दृश्यों कों उनके पुरे वैशम्य ओर नाट्य वैभव के साथ क्रमश: समानांतर दृश्यों के रूप में कलात्मकता से प्रस्तुत किया है ।'' [1] स्पष्ट है कि प्रस्तुत नाटक की प्रकाश योजना अत्यंत कलात्मक हो गई है ।

'आठवाँ सर्ग' में प्रकाश व्यवस्था के माध्यम से कालिदास और प्रियंगुमंजरी के बीच स्थापित संवाद अलोकवृत्त के माध्यम से प्रकट किये हैं । नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने प्रकाश को मंद दिखाकर ओर कभी कभी तेज दिखाकर प्रकाश वृत्त के माध्यम से कालिदास को ही केंद्रित किया है ।

प्रथम अंक के अंतर्गत नाटककार ने रंगमंच निर्देशन में दो आसन, पुस्तकाधार, मदिराकोष्ट, दीपदान, आदि वस्तुओं को प्रकाशवृत्त के माध्यम से दर्शाया गया है । नाटक के दुसरे अंक में प्रियंगुमंजरी पर प्रकाशवृत्त केंद्रित किया है । उसके मन:स्थिति को प्रकाशवृत्त के माध्यम से अधिक उभारा है । नाटककार ने तीसरे अंक के पहले दृश्य के अंतर्गत प्रकाशवृत्त को धीरे - धीरे प्रस्तुत किया है । इस प्रकार से प्रकाशवृत्त के माध्यम से दृश्य परिवर्तन तथा पात्रों की मन:स्थिति को कुशलता के साथ चित्रित करने में नाटककार को पूरी तरह सफलता प्राप्त हुई हैं ।

---

1. जयदेव तनेजा - आज के हिंदी नाटक : परिवेश और परिदृश्य, पृष्ठ - 141

सुरेंद्र वर्मा ने अपने इस नाटक में चरित्रों की विभिन्न मनोदशाओं को व्यक्त करने के साथ साथ कथावस्तु को गति देने की दृष्टि से भी प्रकाश- योजना का सुंदर ढंग से प्रयोग किया है । नाटक के अंत में बनाव एवं संदेह भरी तथा कला के प्रति आसक्ति का स्वातंत्र्य आदि भावनाओं को चित्रित करते हुए निम्नांकित प्रकार की प्रकाश - व्यवस्था की है । प्रकाश व्यवस्था दो आलोक वृत्ती में बदलने लगती है । एक कालिदासपर तो दुसरी नटराजपर । दुश्यंत के कुछ पहले दुसरा प्रकाश वृत्त विलुप्त हो जाता है । कुछ क्षणों के बाद प्रियंगुमंजरी कालिदास के निकट आती है, और कालिदास को पाण्डुलिपि देती है । कालिदास पृष्ट पलटने लगता है । प्रियंगुमंजरी कालिदास के निकट बैठ जाती है । आशंकित कालिदास पन्ने पलटता जाता है । सहसा दोनों एक - दूसरे की ओर देखतें हैं ... और अंधकार ।''[1] इसी तरह के अनेक तनाव भरे या महत्त्वपूर्ण स्थानोंपर नाटककार ने प्रकाश- योजना का उपयोग किया है ।

इस तरह सुरेंद्र वर्मा नें 'आठवाँ सर्ग' नाटक के अंतर्गत प्रकाश- व्यवस्था के माध्यम से दृश्य परिवर्तन तथा पात्रों की मन:स्थिति को बडी कुशलता के साथ चित्रित करने में कामयाबी हासिल की हैं ।

'शकुंतला की अंगूठी' नाटक चौदह दृश्यों में विभाजित हैं । इस नाटक की गतिशीलता प्रभावशाली करने का संकल्प नाटककार ने प्रकाश योजना के द्वारा स्पष्ट किया है । नाटक के पहले दृश्य में कुमार के पूर्वाभ्यास का सारा स्थल प्रकाशित है जो दृश्य के अंत तक वैसे का वैसा ही रहता है । इस अंक का अंत अंधकार में दिखाकर नाटककार ने दूसरे दृश्य को कुमार के कार्यालय पर केंद्रित किया है । दृश्य दो का अंत में अंधकार होता है और फिर तीसरे दृश्य के आरम्भ में पूर्वाभ्यास की जगहपर सभी ओर प्रकाश रहता है, जो अंततक रहकर चौथे दृश्य के लिए अंधकार होकर दृश्य परिवर्तन होता है, जिस दृश्य में कुमार का कमरा प्रकाशित किया जाता है । इस दृश्य में प्रकाश व्यवस्थापक को अपनी कला की कुशलता दिखाने की आवश्यकता है । क्योंकि कमरे में स्थित चारपाई, मेज, किताबों का रॅक आदि वस्तुओं को दर्शाना है । इस दृश्य में कुमार का कमरे में प्रवेश करना और बिजली का बटन टटोलता है, फिर बटन दबाने का अहसास वो दर्शकों से करवाता हैं, फिर कमरा प्रकाशित होता साथ ही स्वगत के उपरांत बिस्तर पर लेट जाता है और एक क्षण में अंधकार हो जाता है । जैसे -

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - आठवाँ सर्ग, पृष्ठ - 74*

"कुमार : नींद नहीं आती ... (प्रकाश)" [1]

पाँचवें दृश्य के अंतर्गत दृश्य के अंत में बिना संकेत के छठवाँ दृश्य पूर्वाभ्यास की स्थानपर आरम्भ होता । इसी दृश्य में इस नाटक की नायिका कनक की अपने पूर्व जीवन की यादों को दिखाया है । जो परिवर्तित प्रकाश व्यवस्था द्वारा दृष्टित होता है । जैसे - "मंच के प्रकाश के धीमें होने के साथ एक आलोक वृत्त कनक पर उभरने लगता है । विराम ।" [2] और दृश्य के अंत में प्रकाश व्यवस्था पूर्ववत हो जाती हैं । इससे नील का प्रस्थान हो जाता है ।

प्रस्तुत नाटक के ग्यारहवें दृश्य में संपूर्ण पूर्वाभ्यास स्थल प्रकाशित होता है । बारहवाँ दृश्य पूर्वाभ्यास स्थल पर ही आरंभ होता है । परंतु रात के दरमियान केवल कुमार और टाइगर दोनों शराब पी रहें हैं यह दृश्य धुँधली प्रकाश व्यवस्था के साथ मंचित किया है ।

इस नाटक के अंतर्गत अनेक ऐसे स्थान हैं जिनके संबंध में नाटककार ने प्रकाश व्यवस्था के संदर्भ में विवेचन नहीं दिया है । 'शकुंतला की अंगूठी' नाटक प्रकाश व्यवस्था के लिए व्यवस्थापक को एक चुनौति है । लेकिन इस नाटक की अधिकतर मंचसज्जा प्रकाश व्यवस्था पर ही निभायी हैं । प्रस्तुत प्रकाश व्यवस्था, स्थल काल और भावदर्शक बनकर मंचीयता की दृष्टि से अपना महत्त्वपूर्ण योगदान निभाने में सफल हो गी हैं ।

4.8 वेश-भूषा एवं केश भूषा (रूपसज्जा)

नाटकीय प्रभाव की दृष्टि से और नाट्य को अधिक वास्तव एवं भ्रांतिपूर्ण विश्व में ले जानेवाली कला रूपसज्जाकार की है । रंगमंचीयता के आवश्यक तत्व के रूप में रूपसज्जा अत्यंत महत्त्वपूर्ण है । रूपसज्जा अभिनेता के चरित्र के अनुरूप रूप परिवर्तित करता है । रूपसज्जाकार अभिनेता को केवल वेशभूषा एवं केशभूषा से रूपांतरित नहीं करता बल्कि वह सच्चे अर्थो में अभिनेता के लिए एक नये चरित्र का आधार बनता है । वेशभूषा एवं केशभूषा से प्रेक्षकों को वास्ततिकता का आभास होता है । परिधान एवं पहनावा मंचपर अनुकूल वातावरण की सृष्टि करने में मदद करता है । डॉ. अज्ञात

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 141*
2. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगूठी, पृष्ठ - 53*

के अनुसार - "वस्त्रों से न केवल शुभा-शुभ, सुख-दुःख, तथा जय-पराजय का बोध होता है वरन्पृथक विचारों, मतमतान्तरों का भी बोध होता है । वस्त्रों के रंगचयन से व्यक्ति की सुरूचि, मनोदशा, विचार आदि का सहज ही बोध होता है ।" [1]

पात्रों के व्यक्तित्व, उसके इतिहास, उसकी प्रवृत्ति या स्थिति को दर्शाने के लिए रूपसज्जा महत्त्वपूर्ण होती है । प्राचीन काल में शरीर को विविध रंगों से सजाना ही रूपसज्जा माना जाता था और विविध वनस्पतियों एवं पेडपत्तियों से शरीर सजाया जाताथा । विविध रंगों लेपन द्वारा चेहरे या शरीर को सजाना मनुष्य की प्राचीन प्रवृत्ति है । "प्रभावकारी रूपसज्जा ही किसी चरित्र के अभिनय विशेष और भाव-प्रदर्शन को सम्पूर्णता प्रदान करती हैं ।" [2]

वेशभूषा एवं केश भूषा का रंगमंच की दृष्टि से अनन्यसाधारण महत्तव है । नाटक के इस तत्व का मंचन तथा अतित कालीन परिवेश के निर्माण में बडा ही सहयोग सिद्ध हुआ है । सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में वेशभूषा पात्रानुकूल एवं प्रसंगानुकूल परिलक्षित होती हैं ।

"शकुंतला की अंगूठी' वर्तमान कालीन परिवेश का नाटक दिखायी देता है । प्रस्तुत नाटक में कुल चौदह पात्र हैं । इनमें पाँच स्त्री पात्र और नौ पुरुष पात्र है । नाटककार ने चरित्रों की वेश भू एवं रंगभूषा संबंधी केवल निम्नांकित संकेत दिये हैं, - "टाइगर का प्रवेश । उसके आदर्श हिंदी नायक है । वैसी ही वेश-भूषा वैसी ही चालढाल ।" [3] निरंजन के वेश एवं केश भूषा के संदर्भ में उसकी छोटी सी दाढी का उल्लेख नाटककार ने दिया है ।

वास्तव में प्रस्तुत नाटक पूर्ण रूप से वर्तमान मं ही घटित होता है । कुमार नामक एक शौकिया निर्देशक कुछ रंगकर्मियों को एकत्रित करके कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुंतल' का मंचन करने की तैयारी कर रहा है । पूर्वाभ्यास के दरमियान वह वर्तमानकालीन सामाजिक वेश एवं केश भूषा रचनावाले अभिनेताओं से अभ्यास करवा रहा है । परिणामत: सब अभिनेताओं की वेशभूषा अतीत का स्मरण दिलानेवाली होने की कोई गुंजाईश नहीं हैं ।

---

1. *डॉ. अज्ञात - रंगमंच सिद्धांत एवं व्यवहार, पृष्ठ - 146*
2. *डॉ. विश्वभावन देवलिया - नाटय प्रस्तुति स्वरूप और प्रक्रिया, पृष्ठ : 224*
3. *सुरेंद्र वर्मा - शकुंतला की अंगुठी, पृष्ठ - 3*

प्रस्तुत नाटक के सारे चरित्र आधुनिक युग के महानगरीय निवासी हैं, अत: स्पष्ट है कि पुरुषों के लिए जिन पँट, टी शर्ट, शर्ट, टाय, कोट, जैकिट, बूट तथा स्त्रियों कि लिए ऊँची साडियाँ, सलवार कमिज तथा नये फॅशन के ड्रेसिस, सेठानी के लिए ऊँची और प्रौढ व्यक्तिवाली वेशभूषा का होना आवश्यक है। मैनेजर के लिए थ्री सूट की आवश्यकता है। आधुनिक शहर का यह नाट्य-दल पाश्चात्य भाषा एवं उनके तौर-तरिकों सें प्रभावित है। प्रस्तुत नाटक प्राथमिक अवस्था में चल रहा है। इसलिए यहाँ पौराणिक या ऐतिहासिक वेशभूषा की कोई आवश्यकता नहीं हैं। यहाँ विशेषकर यह बात महत्त्वपूर्ण है कि प्रस्तुत नाटक चौदह दृश्यों का होने के कारण पात्रों की वेश भूषा में बदलाव की गुंजाईश है।

'द्रौपदी' सुरेंद्र वर्मा का आधुनिक नाटक है। अत: इस नाटक के पात्र भी वर्तमान कालीन हैं। प्रस्तुत नाटक में कुल इक्कीस पात्र हैं इसमे बारह पुरुष और नौ स्त्री पात्र हैं। प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने निम्न ासंकेत चरित्रों की वेश भूषा संबंधी दिये हैं। जैसे - "मेरे सुट पर इस्त्रि कर दी है, या नहीं।"[1] तथा नाटक के पहले अंक में अंजना के साडी के बारे में जिक्र हुआ है।

प्रस्तुत नाटक वर्तमान कालीन है। नाटक के सभी पात्र तथा संवाद भी वर्तमान कालीन हैं। प्रस्तुत नाटक का नायक मनमोहन एक कंपनी में 'सिनियर असिस्टंट मॅनेजर' के पद पर कार्य कर रहा है। इसी पद के अनुसार इसकी वेश एवं केशभूषा है। इस में शर्ट, टॉय, पँट, बुट इस तरह की वेशभूषा आवश्यक है। इसके साथ-साथ दफ्तर के मैनेजर और डायरेक्टर की भी वेश-भूषा में थोडी बहुत बदलाव आने की शक्यता है। याने ये दोनों पद मनमोहन के पद से भी ऊँचे है। अत: उनका थ्री सूट में होना आवश्यक हैं।

अनील और राजेश प्रस्तुत नाटक के युवा पात्र हैं। दोनों कॉलेज जाते हैं। इसलिए इनकी वेश-भूषा में आधुनिकता अवश्य दिखायी देती हैं। इनके पहनावे में जिन शर्ट-पँट, टी शर्ट, जॅकिट, फॅन्सी सूट, गॉगल्स आदि प्रकार की वेशभूषा होना स्वाभाविक है। प्रस्तुत नाटक के छोटे पात्र (बालपात्र) मुन्ना और मुन्नि की वेशभूषा स्कूली बच्चों की तरह की जा सकती है। सुरेखा मनमोहन की पत्नी हैं। ॲसिस्टंट मैनेजर की पत्नी होने के कारण उसका पहनावा या वेशभूषा में ऊँची साडियाँ, गहनें आदि हो सकते हैं।

---

1. *सुरेंद्र वर्मा - द्रौपदी, पृष्ठ - 76*

वर्षा और अलका कॉलेज की लडकियाँ हैं । उनके रहन-सहन में पाश्चात्य संस्कृति की झलक प्रच्युर मात्रा में दिखायी देती है । इसी बात से उनकी वेशभूषा का पता चलता है । अत: उनके पेहरावे में सलवार-कमीज, स्कर्टस् या आधुनिक फॅशन की ड्रेसिस और पैरों में ऊँची सैंडल हवाई चप्पल, पर्स आदि बातों को अपनाया जा सकता है ।

अंजना, रंजना, वंदना, मंदा ये पात्र भी वर्तमान युगीन हैं । तथा इन सभी पर महानगरीय परिवेश का प्रभाव पडा हुआ दिखायी देता हैं । इसमें मंदा जो सुरेखा की समवयस्क सहेली है, इसपर पडे महानगरीय वातावरण का प्रभाव हम प्रस्तुत संकेत द्वारा देख सकते हैं । जैसे - ''मंदा अपना मेकअप दुरूस्त कर रही है ।''[1] अंजना, वंदना और रंजना ये तीनों स्त्रियाँ उनके संवाद तथा भाषा से ऊँचे समाज की लगती है । उनके रहन-सहन और बोल-चाल से भी यही बात स्पष्ट होती है । पुरषों के साथ बीयर पीना सीगारेट के कश लेना तथा पार्टियों में जाना आदि पाश्चात्य आदतों से ग्रस्त आधुनिक स्त्रिया परिलक्षित हैं ।

सुरेंद्र वर्मा ने प्रस्तुत नाटक में मनमोहन को चार रूपों में प्रस्तुत करने का वैशिष्ट्यपूर्ण प्रयोग किया है । मनमोहन का शारीरिक पेहराव एक ही है, लेकिन इन के नकाबों को अलग अलग रंगों में पेश किया है । इसमें लाल, काला, पीला और सफेद इन चार रंगों को अपनाया गया है ।

अत: 'शकुंतला की अंगूठी' वर्तमानकालीन होने के कारण नाटक के पात्र, संवाद, भाषा तथा पूरे नाटक पर पाश्चिमात्य संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता हैं ।

सुरेंद्र वर्मा आधुनिक नाटककारों में एक ऐसे नाटककार हैं, जिन्हों ने मंचीय तकनीकी के साथ अपनी नाट्य कला को बडी खूबी के साथ मिलाया है । मंचीय तत्वों के संदर्भ में सूक्ष्म से सूक्ष्म जानकारी रंगकर्मियों को देने की क्षमता उन में समाहित है । सुरेंद्र वर्मा ने अपने 'आठवाँ सर्ग' नाटक में वेश एवं केश भूषा तथा रूपसज्जा की स्वतंत्र रूप में भी समग्र जानकारी न दी हो ''नुपूर हाथ में वस्त्रखंड ... ।''[2] केवल यही एक मात्र संकेत लेखक ने पूरे नाटक के अंतर्गत अंकित किया है । स्पष्ट है कि नाटक पूर्ण रूप से अतीत कालीन परिवेश में ही मंचीत करने का नाटककार का इरादा स्पष्ट है । दृश्य - सज्जा तथा मंचीय वस्तुओं

का वर्णन करते हुए लेखक ने अप्रत्यक्ष रूप में अतीतकालीन रूपसज्जा एवं वेशभूषा का ही आग्रह रखा हुआ दृष्टिगोचर होता है ।

नाटक की पहली प्रस्तुति में वेशभूषा विषयक कार्य को रोशन अल्काजी तथा राजेश विवेक आदि ने सफलतासे प्रस्तुत किया था ।

सुरेंद्र वर्मा का 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक पूर्ण रूप से ऐतिहासिक है । प्रस्तुत नाटक में सभी पात्र एंतिहासिक हैं । लेकिन नाटककार ने पूरे नाटक में कहीं भी वेशभूषा संबंधी निर्देश नहीं दिये हैं । किंतु नाट्य शैली के अनुसार स्पष्ट होता है कि नाटककार की अपेक्षा यह है कि नाटक पूर्ण रूप से ऐतिहासिक रूपसज्ज में प्रदर्शित हो ।

'सेतुबंध' नाटक भी ऐतिहासिक ही हैं । यहाँ सुरेंद्र वर्मा ने कालिदास कालीन साहित्य का गहराई से अध्ययन किया हुआ दिखायी देता हैं । आहार्य अभिनय के अंतर्गत आनेवाली रंग-वेश एवं केश भूषा का नाटककार ने आने 'सेतुबंध' नाटक में स्वतंत्र रूप से कहीं ब्यौरा नहीं दिया है, किंतु नाटक के युगीन परिवेश के आधार पर सभी अभिनेताओं की केश-वेश-रंग भूषा गुप्त युगीन हैं । स्पष्ट है कि नाटक पूर्ण रूप से अतीतकालीन परिवेश में ही मंचित करने का नाटककार का इरादा है । दृश्यसज्जा तथा मंचीय वस्तुओं का वर्णन करते हुये लेखक ने अप्रत्यक्ष रूप से अतीतकालीन रूप सज्जा एवं वेशभूषा का ही आग्रह किया है ।

वेश-एवं केश भूषा काल के अनुरूप और आकर्षक उत्पन्न करने के लिए प्रस्तुत नाटक में अनेक अवसर हैं । भले ही फिर नाटककार ने इस विषय में केवल आवश्यक संकेत ही दिए हैं ओर बाकी सब निर्देशक पर छोडा हैं ।

4.9 रंगमंचीय प्रस्तुति एवं दर्शकीय संवेदना :

कुशल निर्देशक के निर्देशन से नाटककार द्वारा नाटक में दिए गए रंगकर्ताओं के आधार पर किसी भी नाटक का प्रस्तुतिकरण कुशलता से किया जाता है । नाटक में रंगमंचीय प्रस्तुति का अपना अलग महत्व होता है । रंगमंचीय प्रस्तुति में निर्देशक और नाटककार के साथ-साथ अन्य रंगकर्मियों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है । नाटक रंगमंच पर खेला जाता है और दर्शक उसे देखने का आनंद लूटते हैं । "रंगमंचीय प्रस्तुति में दर्शक का बहुत महत्त्व है क्योंकि दर्शक रंगमंचीय क्रियाओं का केवल दर्शक न रहकर उसका बोधज्ञ है ।" [1]

नाटककार से लेकर द्वारपाल तक का मंचीय आयोजन दर्शकीय संवेदनाओं को जगाने के लिए महत्त्वपूर्ण सिद्ध होता है । डॉ. चंदूलाल दुबे के मतानुसार - "नाटक ओर दर्शक अन्योन्यप्रित हैं । नाटक देखने के लिए दर्शक आतें हैं । दर्शकों के लिए नाटक खेले जाते हैं । नाटक की कथावस्तु, मंचीय एवं अभिनय से सहृदय दर्शक प्रभावित होता है ।" [2]

सुरेंद्र वर्मा के नाटकों की रंगमंचीय प्रस्तुति और दर्शकीय संवेदना को यहाँ संग्रहीत करने का उद्देश्य केवल यही है कि प्रत्यक्ष दृश्य रूप में प्रस्तुत नाटकों का क्या रूप रहा है ।

सुरेंद्र वर्मा ने समाज और व्यक्ति विघटन की प्रस्तुति बडी सफलता के साथ 'द्रौपदी' नाटक में चित्रांकित की है । नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने फ्लैश-बैक के माध्यम से अतीत की सृष्टियों को रंगमंचपर प्रस्तुत करने में बुद्धिचातुर्य का वैशिष्ट्यपूर्ण प्रयोग किया है । प्रस्तुत नाटक में स्त्री-पुरूष संबंधों की स्वच्छंदता, नशापन, युवक-युवतियों के रोमांस का प्रस्तुतिकरण नाटककार ने बिलकुल नये रूप में किया है । इस संदर्भ में रमेश गौतम कहते हैं - "अर्थप्रदान युग में सुख-सुविधाओं को भोगते हुए तथाकथित मनुष्य के जीवन की अंदरूनी ट्रेजडी मानो इस नाटक में सजीव हो उठी हैं और नाटककार वर्मा के रंगमंचीय व्याकरण की गहरी समझ का यह नाटक प्रमाण है ।" [3]

---

1. *जयदेव तनेजा - समकालीन हिंदी नाटक और रंगमंच, पृष्ठ - 130*
2. *डॉ. चंदूलाल दूबं - नाटक और रंगमंच, पृष्ठ - 244*
3. *रमेश गौतम - मिथक और स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक, पृष्ठ - 177*

'द्रौपदी' नाटक का सन 1971 में तीन बार प्रदर्शन हो चुका है । इसमें हिंदी में ओम शिवपुरी के निर्देशन में 'दिशांतर' नई दिल्ली द्वारा प्रदर्शित हुआ है । मराठी में आमोल पालेकर के निर्देशन में 'इंडिया कलचरल लीग' मुंबई द्वारा पेश किया गया है और कन्नड में आर. नागेश के निर्देन में 'कन्नड साहित्य कला संच' बंगलोर द्वारा इसका प्रदर्शन हो चुका है । इस नाटक की कन्नड और मराठी में सफल प्रदर्शन इसकी लोकप्रियता का सूचक है ।

सुरेंद्र वर्मा का 'द्रौपदी' नाटक नाटककार की एक बडी सशक्त उपलब्धि हैं । नाटककार ने बोलचाल की भाषा का भ्रम कर के सृजनात्मकता व्यंजनात्मकता को दिखाकर दर्शकीय संवेदनाओं को उजागर किया हैं । यहाँ प्रस्तुत चुस्त संवाद, मादकता भरे यौवन संबंध, यौनाचार की चर्चा, आदि में दर्शकीय संवेदना ओजित होती है जिस से दर्श की भावना में अंदोलन पैदा हो गया है और दर्शकों की नाटक के प्रति आकर्षकता बढाई है ।

सुरेंद्र वर्मा ने 'सेतुबंध' नाटक में ऐतिहासिक वातावरण वेशभूषा, संवाद आदि के माध्यम से रंगंचपर गुप्तकालीन इतिहास को प्रस्तुत किया है । प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने प्रवरसेन और उसकी माँ के मन की तरंगों को भाव-भावनाओं को एक विशिष्ठ रंगछटा के साथ रंगमंच पर प्रस्तुत किया है ।

प्रभावती अपने विवाहपूर्व प्रेमी कालिदास से जुडकर मन से कालिदास को अपना पति मान चुकी है और शरीर से अपना धर्म निभाते हुए रूद्रसेन को धर्मपति मानती है । प्रस्तुत परिस्थिति में द्विवधा मन:स्थिति का यह अंर्तद्वंद्व पाठकों को भाव विभार बनाए बिना नहीं छोडता इससे दर्शकों को भी अत्यधिक संवेदनशील बनाया जाता है । प्रतिभा अगरवाल के कथन से - "असल में सुरेंद्र वर्मा का 'सेतुबंध' एक उत्कृष्ठ मंचीय नाटकैं, लेकिन अगर उस नाटक को प्रेक्षकों तक योग्य रूप में संप्रेषित नहीं किया जाता है, तो उस नाटक की प्रस्तुति असफल मानी जायेगी । प्रस्तुत नाटक का प्रयोग 1973 में अनामिका ने किया था ।"[1]

---

1. *प्रतिभा अगरवाल - सृजन का सुख- दु:ख, पृष्ठ - 99,99*

प्रस्तुत नाटक रंगमंचीय प्रस्तुति की दृष्टि से उत्कृष्ट एवं सक्षम हैं । नाटक में संघर्ष, तनाव, प्रेम आदि बातें दर्शकीय संवेदना बढाने में अत्यंत सक्षम दिखायी देती हैं ।

'आठवाँ सर्ग' को रंगमंचीय प्रस्तुति में खूब बढावा दिया गया है । इस नाटक में दृश्यबंध के विविध उपकरण, अभिनय स्थलों और धरातलों का कलात्मक और प्रभावपूर्ण प्रस्तुतिकरण देखने को मिलता है । इस संबंध में जयदेव तनेजा के विचार दृष्टव्य हैं - ''कमनीय काम - संबंधों का उदात्त चित्रण भाषा के अभिजात्य समस्या की समकालीन प्रासंगिकता, चरित्रों की जीवंतता, संवादों की चरित्रजन्य लययुक्तता के साथ नयनाभिराम दृश्यबंध, श्रेष्ठ अभिनय, कल्पनापूर्ण संगीत, प्रकाश व्यवस्था तथा कुशल निर्देशन के कारण 'आठवाँ सर्ग' की प्रस्तुति सर्वश्रेष्ठ नाट्य प्रदर्शनों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है ।''[1]

प्रस्तुत नाटक में प्राकृतिक चित्रण के रूप में गोधुली बेला का वर्णन, शिप्रा का किनारा, पक्षियों का मधुर कलरव आदि के माध्यम से दर्शकीय संवेदनाओं को पृष्ठभूमि के रूप में उभारने का प्रयास किया है । अनसूया और प्रियंवदा के संवादों से चित्रित शयनागार का चित्रण, रतिबेला का वर्णन, मिलन का आभास देनेवाली हरकतें, रति-क्रीडा से नारी की स्थिति आदि का चित्रण किया है । ऐसे प्रसंग में दर्शकीय संवेदना अत्युच्य शिरन पर पहुँच जाती हैं ।

'आठवाँ सर्ग' नाटक के बारे में निर्देशक के रूप में सुरेंद्र वर्मा और राजेंद्र गुप्त ने पूरे नाटक को ध्यान में रखकर अपनी संवेदना इस प्रकार प्रकट कि हैं - '' ... गुलशन की एडवरटाइजिंग एजेंसी, चुस्त कॉफी, आकर्षक बिजुअल, ××× कविश्रेष्ठ कालिदास के भवन का बाहरी कक्ष ... शालभंजिका का प्रक्षालन करती अनसूया, लवंगता की जडमें केतकी के पराग से गोल आलवाल बनाती प्रियंवदा ... अंगद ओर वलय के साथ चित्रफलक के समुख तलिका चलाती प्रियंगुमंजरी ... ।''[2]

---

1. *जयदेव तनेजा - समकालीन हिंदी नाटक और रंगमंच, पृष्ठ 141*
2. *सुरेंद्र वर्मा - आठवा सर्ग, पृष्ठ - 10*

दर्शकीय संवेदना के रूप में अपना मत प्रकट करते हुए जयदेव तनेजा कहतें हैं - "नेपथ्य से काम की वैतालिक कोयल की कूक एवं मंचपर प्रियंवदा के कोमल मधुर कंठ से ऋतुसंहार के छटे सर्ग का दूसरा श्लोक सुनकर दर्शक पाठक वसंत के आगमन और मदनोत्सव कालीन समय में आनायास संक्रमण कर जाता हैं ।" [1]

सुरेंद्र वर्मा के 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक का प्रथम रंगमंचीय प्रयोग नाट्य विद्यालय द्वारा किया गया । नाटककार ने इसकी प्रस्तुति में बिलकुल नया रूप धारण किया है । प्रस्तुत नाटक में एक ही रंगमंच दृश्य को प्रकाश योजना के साथ दो भागों में विभाजित करना, पात्रों के नाम, आभूषण रूढि-परंपरा या प्रभाएँ आदि के माध्यम से ऐतिहासिक वातावरण की निर्मिति रंगमंचीय प्रस्तुति से हुई है । प्रतोष और शीलवती की रति-क्रीडा का चित्रण और उसी क्रीडा में उत्पन्न सूक्ष्म और सांकेतिक आवाजों का अत्यंत कलात्मक ढंग से संकेत के साथ रंगमंचपर प्रस्तुत किया है ।

शीलवती का हाथ में जयमाला लेकर सभा मंडप में जाना, उसका वहाँ चलने का वर्णन, आर्य प्रतोष का आगमन आदि बातों के साथ दृश्य अंत तक सारी घटनाएँ दर्शकोंपर अपना प्रभाव डालने का महत्त्वपूर्ण कार्य महत्तरिका के संवाद से स्पष्ट होता है । इसके साथ-साथ शीलवती और प्रतोष के मिलन से उनकी बातें, साँसों की बढती-उतरती तीव्रता एवं मंदता से दर्शकीय संवेदनाएँ अपनी अंतिम सीमा पार करने के लिए विवश हो जाती हैं । प्रस्तुत नाटक में दृश्यबंध को लचिला बनाकर ओक्काक - महत्तरिका, प्रतोष-शीलवती आदि दो दृश्यों को वैशम्य और कलात्मकता के साथ दर्शकों के सामने रखने का प्रयोग वर्मा ने किया है । दर्शकीय संवेदनाओं के संदर्भ में डॉ. कन्हैयालाल नंदन कहते हैं - "इस नाटक को उत्तरा बावरकर ने रानी के रूप में, राजेंद्र गुप्ता ने राजा के रूप में और सुरेखा सिकरी ने परिचारिका के रूप में जिस आदाकारी से मंचपर अंजाम दिया, वह उस शाम के मानो हॉल के हर दर्शक के लिए एक विशिष्ट नाट्यानुभव बन गया है । प्रस्तुति का समग्र प्रभाव इस कदर गहन और मन को झकझोरने वाला था कि लगे जैसे किसी पात्र के अभिनय में कोई गलती नहीं । प्रकाश और ध्वनि संयोजन कुछ ऐसा कि समूचे परिवे की ऐतिहासिकता और अंतर्द्वन्द्व सामायित होकर विद्यमान हैं ।" [2]

---

1. *जयदेव तनेजा - आज के हिंदी नाटक : परिवेश और परिदृश्य, पृष्ठ - 149,149*
2. *डॉ. कन्हैय्यालाल नंदन - नाट्य परिवेश, पृष्ठ - 90*

अत: उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता हैं कि नाटककार सुरेंद्र वर्मा का 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' नाटक ने रंगमंचीय प्रस्तुति में उत्कृष्टता की सीमा लाँघ दी है और दर्शकीय संवेदनाओं को जगाने एवं बढाने में प्रस्तुत नाटक अत्यंत सक्षम बन गया है ।

सुरेंद्र वर्मा का 'शकुंतला की अंगूठी' नाटक रंगमंच की दृष्टि से एक नयी एवं वैशिष्ठ्यपूर्ण उपलब्धि हैं । यह नाटक श्री सुभाष गुप्ता के निर्देशन में 'संभव' नयी दिल्ली ओर 'भारत-भवन' भोपाल द्वारा बडी सफलता से मंचित हुआ है । प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने कथावस्तु की प्रस्तुति करते समय चौदह पात्रों का किया गया निर्वाह, ऐतिहासिकता और आधुनिकता का सुंदर समन्वय, व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग, बहुसंख्य गीतों का प्रयोग आदि के द्वारा सुरेंद्र वर्मा की सृजनशीलता और रचनाकुशलता की प्रतिति स्पष्ट होती है । दृश्य प्रस्तुतिकरण में नाटककार की प्रतिभा ने कमाल कर दिया हैं । नये एवं वर्तमान पीढी के प्रेम की परिसीमा तथा स्त्री-पुरुष संबंधों की स्वच्छंदता को ऐतिहासिक संदर्भ लेकर वर्तमान स्थिति के साँचे में ढालने का प्रयोग किया है ।

सुरेंद्र वर्मा का 'शकुंतला की अंगूठी' नाटक में नाटककार ने बोलचाल की भाषा का उपयोग कर के दर्शकीय संवेदनाओं को उजागर करने का प्रयास किया है । सीगल नॉव्हल की चर्चा, कबुतर के जोडे के प्रेम प्रणय की चर्चा, प्रेमचर्चा, यौन संबंधों से उत्पन्न समस्याएँ, जैसे - पेट रहना, अबॉर्शन आदि के द्वारा दर्शकीय संवेदना ओजित होती हैं और दर्शकों की भावना में आंदोलन पैदा होता है । सुरेंद्र वर्मा ने मिथकीय संदर्भों और वर्तमान संदर्भों के बीच संबंध स्थापित करने के लिए प्रतिकों का प्रयोग किया है ।

नाटक में देशी-विदेशी नामों, संदर्भों की भरमार हैं । टेनिस विलियम्स, इलिया उजान, दोस्तोवस्की, गॉडफादर, स्ट्रीटकार एवं इंद्रजित, अंधायुग, देवदास, वसंतसेना आदि नामों का जिक्र इस नाटक में हुआ है । " काले वस्त्र पहनकर जींदगी का सोग मना रहे निरंजन (सुरेंद्र शर्मा) और बजह बे बजह हँसनेवाली अभिनेत्री रेखा (कविता वैद्य) के चरित्र और रिश्ते रोचक हैं । टाइगर ओर मैनेजर की भूमिका में संजीव दत्त और अनील चौधरी और मंदाकिनी के रूप में कुलदीप कौर ने अपने आत्मविश्वास के साथ अभिनय किया ।"[1] इस प्रकार प्रस्तुत नाटक में मिथकीय संदर्भ और वर्तमान संदर्भों के दरमियान संबंध स्थापित कर के दर्शकों की नाटक के प्रति आकर्षकता बढाई हैं ।

निष्कर्ष

सुरेंद्र वर्मा के नाटकों का रंगमंचीयता के संदर्भ में किए गए विवेचन के आधारपर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि -

(1) दृश्यबंध और मंचसज्जा के विशिष्ट प्रयोगों में 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक', 'शकुंतला की अंगूठी' और 'द्रौपदी' विशेष उल्लेखनीय नाटक हैं । सुरेंद्र वर्मा का 'सेतुबंध' नय संपूर्ण नाटक एक ही दृश्यबंध पर मंचित हो चुका हैं । नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों में तीन प्रकार की मंचसज्जा का प्रयोग किया है । जैसे ...

पूर्णरूप से अतीतकालीन पृष्ठभूमि को अभिव्यक्त करनेवाली मंचसज्जा

(अ) सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक,

(आ) आठवाँ सर्ग,

(इ) सेतुबंध ।

अतीत का संबंध न रखते हुए सिर्फ आधुनिक जीवन संदर्भ से संबंधित मंचसज्जा -

उदा. - 'द्रौपदी'

मिश्र मंचसज्जा जिसमें अतीत और वर्तमान का मिश्र रूप नजर आता है ।

उदा. 'शकुंतला की अंगूठी'

2. विवेच्य नाटकों में संवाद और भाषा शैली के अभिनव प्रयोग दिखायी देते हैं । इनमें खण्डित संवाद, उपमात्मक संवाद, एकलाप संवाद, सांकेतिक संवाद, टेलीफोन द्वारा संवाद आदि का प्रयोग प्रच्युर मात्रा में दिखायी देता है । विवेच्य नाटकों के संवादों में पात्रों के मनोविज्ञान को विशेष प्रश्रय मिला हैं । इन नाटको में संस्कृत, अँग्रेजी, कई आदि भाषाओं का वर्तमान जीवन के संदर्भ यथार्थ प्रयोग हुआ हैं । सामान्यत: इन नाटकों के संवाद एवं भाषा पात्रानुकूल और घटनानुकूल है ।

3. नाटककार ने ध्वनि-संकेतों के अंतर्गत लोगों का कोलाहल, उद्घोषक की आवाज, नगाडे की आवाज, नारियों की खिलखिलाहट बच्चों की खिलखिलाहट, आहट, घोडों के टापों एवं हिनहिनाव की आवाज, पक्षी के बोलने की आवाज, ट्रैफिक का शोर सीटी आवाज, तालियाँ, घंटी की आवाज, नुपुरों की

आवाज, टेलिफोन की आवाज, आभूषणों एवं वस्त्रों की सरसाहट, पुरूषों के स्वर की आवाज, आदि का यथास्थान प्रयोग किया हैं । इससे नाटक में स्वाभाविकता आ गयी है ।

4. सुरेंद्र वर्मा के सभी नाटकों में पार्श्व संगीत योजना के अभिनव प्रयोग किये गये हैं । नाटककार ने अपने नाटकों में विविध प्रकार के संकेत दिये हैं, उन संकेतों के अनुसार भारतीय तथा पाश्चात्य वाद्य संगितों का आयोजन किया हैं ।

5. नाटककार ने अपने कुछ नाटकों में गीतों के अभिवन प्रयोग किए हैं । इन गीतों के माध्यम से भारतीय जन-जीवन का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है । साथ ही साथ कुछ नाटकों में ऐसे गीतों की रचना की गयी है जो अतीत की पृष्ठभूमि पर वर्तमान जीवन संदर्भ को व्यंगात्मक रूप में अभिव्यजित करती है । उन गीतों का व्यंग आज के जीवन की विडम्बना को रूपायित करता है । कुछ नाटकों में बालगितों, प्रेमगीतों, पहाडों को लय और ताल के साथ गाने का प्रयास किया गया है ।

6. सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में पात्रों की वेश एवं केश भूषा को विविध शैलियों में दर्शाने का प्रयास किया गया है । कुछ नाटकों में अतीत कालीन तथा कुछ नाटकों में वर्तमानकालीन रूप सज्जा का प्रयोग किया गया है । 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' तथा 'सेतुबंध' नाटकों में रूपसज्जा संबंधी कोई विश्लेषण नहीं दिया हैं । लेकिन नाटककार की इच्छा है कि नाटक पूर्ण रूप से ऐतिहासिक रूपसज्जा में मंचित हो ।

7. सुरेंद्र वर्मा ने अपने सभी नाटकों में प्रकाश योजना के विविध रूप सज्जित किय हैं । विशेषत: उन्होंने नाटकों के अंक विभाजन तथा दृश्य विभाजन के लिए प्रकाश- योजना का उपयोग किया है । नाटकों के दृश्य परिवर्तन के लिए तथा पात्रों की मन:स्थिति और कार्य व्यापारों को दर्शाने के लिए प्रकाश योजना की विविधता का सार्थक प्रयोग किया है । प्रकाश योजना व आयोजना में, प्रस्तुतिकरण में विविध प्रकार के अनेक आधुनिक उपकरणों का उपयोग हुआ हैं । जैसे - फ्लैश-बॅक, साइक्लोरामा आदि ।

8. सुरेंद्र वर्मा ने अपने सभी नाटकों में वर्तमान जीवन संदर्भ के परिप्रेक्ष्य में तीटीक बिम्बों तथा प्रतिकों के सार्थक प्रयोग किये हैं, जो पुरातन मिथकों को नया अर्थ देने में सक्षम हैं ।

9. रंगमंचीयता की दृष्टि से विवेच्य नाटक अत्यंतसफल हैं । 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक', 'आठवाँ सर्ग', शकुंतला की अंगूठी' आदि नाटकों को मंचपर सफलता से प्रस्तुत किया गया हैं । इसमें 'शकुंतला की अंगूठी' हिंदी के साथ-साथ मराठी और कन्नड में भी प्रदर्शित हो चुका है । अत: दर्शक और पाठकों में गहरी संवेदना निर्माण करने में सुरेंद्र वर्मा के सभी नाटक अत्यंत सक्षम हैं ।